॥ श्रीः ॥

सरोजिनी नाटक।

अर्थात्

चित्तौरआक्रमण

(वङ्गभाषा से अनुवादित)

भारतजीवनसम्पादक बाबू राम-
कृष्णवर्म्मा द्वारा प्रकाशित।

॥ काशी ॥

भारतजीवन प्रेस में मुद्रित हुआ।

सन् १९०२ ई०।

प्रथम बार १०००] [मूल्य ॥)

भूमिका ।

इस नाटक के प्रथम वङ्गभाषा में कलकत्तानिवासी श्री-ज्योतिरीन्द्रनाथ ठाकुर महाशय ने रचा था, और बहुत दिन हुये इसका भाषानुवाद पण्डित केशवप्रसादमिश्र जी ने लखनऊ से प्रकाश किया था। इस ग्रन्थ की हिन्दी का-पियां दुष्प्राप्य हो गई थीं । उक्त श्रीज्योतिरीन्द्रनाथ ठाकुर महाशय ने हमको भाषानुवाद करने का अधिकार दिया था किन्तु जब पण्डित केशवप्रसाद जी इसका भाषानुवाद करही चुके थे तो पुनः परिश्रम करना हमने व्यर्थ समझा। अतएव उनको पत्र लिखा कि यदि वे आज्ञा देवें तो हम उसे ज्यों का त्यों प्रकाश कर देवें । पण्डित जी ने भी ह-मारी प्रार्थनानुसार आज्ञा दे दी, अतएव हम उन्हीं के किये हुये अनुवाद को प्रकाश करते हैं, और उन्हे हृदय से धन्यवाद देते है । आशा है कि नाटक के प्रेमी महाशय इस ग्रन्थ को देख कर प्रसन्न होंगे ।

रामकृष्ण वर्म्मा

प्रकाशक ।

शुभमस्तु

॥ सरोजिनी ॥

वा

चित्तोर-आक्रमण नाटक ।

प्रथम अङ्क ।

प्रथम गर्भाङ्क ।

देवग्राम - चतुर्भुजा देवी के मन्दिर का सन्मुखस्थ श्मशान ।

(लक्ष्मणसिँह का प्रवेश)

ल० — (स्वगत) एक तो आधी रात है और फिर अमावास्या । क्याही अन्धकार है ! प्राणियों का शब्द भी नहीं सुन पड़ता; केवल सियार और सियारियों का अमंगल हुहुआना तो कभी कभी जान पड़ता है, और सब प्रकृति निद्रा में मग्न है इस समय विकट स्वर मे "मैं क्षुधित हूं" कह कर किसने रात्रि की गंभीर निःशब्दता मे विघ्न डाला ? ऊः क्याही भयानक स्वर था, ऐसा शब्द मनुष्य का तो होता नहीं, एक बार सुन कर अभी भी मेरा हृदय कांपता है ; मुझे जान पड़ता है कि वह स्वर इस ओर से आया है

क्योंकि ऐसा विकट स्वर श्मशान भूमि को छोड़ कर कहीं से नहीं आ सकता। सुनते हैं कि अर्द्ध रात्रि को योगिनी गण यहां फिरती हैं होय न होय वह उन्हीं का स्वर होगा। परन्तु यहां तो कोई भी नहीं दीख पड़ता। केवल यहां वहां पड़े नरमुण्ड मुख फैलाये हुए विकट भाव से हंस रहे हैं- मानो हमारा राज परिच्छद देख कर ठट्ठा करते हैं। नीच जानकर जिनके सङ्ग वार्त्ता करने को भी जी नहीं चाहता, उन्हीं के साथ एक दिन शयन करना पड़ेगा। मृत्यु! तेरे कराल ग्रास से किसी को छुटकारा नहीं। तुझे धनी, दरिद्री, राजा प्रजा सब समान हैं। वह क्या, वह? धैर्य्य से) आग कैसी जल उठी? जान पड़ता है कोई प्रेत योनि होगी। वह देखो धीरे २ हटी जाती है, अच्छा चलो उसके पीछे चलें। आंय यह तो पकड़ी ही नहीं जाती। यह क्या? अब तो देख ही नहीं पड़ती, कहां अन्तर्धान हो गई? देवता, मनुष्य वा पिशाच जो कोई हो शीघ्रही दर्शन देकर हमारे मन का सन्देह दूर करो। (वज्रध्वनि) यह क्या? अकस्मात यह बज्रनिनाद क्यों हुआ? यह क्या! यह तो थमता ही नहीं! (वारम्बार ध्वनि होती है) उह! कान बधिर हो गये, आकाश तो निर्म्मल है, फिर ऐसी वज्रध्वनि कैसे होती है? आंय! अब यह क्या! अकस्मात् यह उजियाली इधर कहां से हो गई?

किसकी ओर अर्थ है ? अवश्य इस में कुछ गूढ़ अर्थ होवेगा, हमारे महिलागण में जिसका नाम पद्मपुष्प पर है उसे तो कहीं नहीं अर्थ है ? हमारे चाचा भीमसिंह की स्त्री का नाम पद्मिनी है और वे प्रसिद्ध रूपवती भी हैं। तब क्या उन्हीं से दैववाणी का अर्थ है ? हो भी सकता है, क्योंकि वेही तो हमारी सब विपत्तियों की मूल कारण हैं; उन्हीं के रूप पर मोहित होकर पठान राजा अलाउद्दीन वारम्वार चित्तौर पर चढ़ता है, जो वे न होंगी तो और कौन हो सकता है ? किन्तु "सरोजिनी" भी तो पद्म का दूसरा नाम है—नहीं, सरोजिनी से कभी न अर्थ होगा। नहीं यह कभी नहीं हो सकता फिर वाप्पा वंशज द्वादश राजकुमार राज्याभिषिक्त होकर एक २ यवनों के साथ युद्ध में प्राणत्याग करेंगे तब हमारे वंश में राजलक्ष्मी रहेगी यह भी कैसी भयानक बात है ! जो कुछ होय हमारे द्वादश पुत्र यदि युद्ध में प्राणत्याग करैं तो भी इतने शोक की बात नहीं है क्योंकि रणक्षेत्र में प्राण देना ही तो क्षत्रियों का परम धर्म्म है; किन्तु दैववाणी का प्रथम भाग तो कुछ भी समझ में न आया; क्या जानें हमारे परिवार में कौन स्त्री के रक्तपान करने के निमित्त देवी प्यासी हैं ! मातः चतुर्भुजे। हमें घोर सन्देह में डाल कर आप कहां चली गईं ? फिर एक बार प्रगट होकर हमारे जी का स-

न्देह दूर करो। आंय। यहां तो कोई भी नहीं है तब मैं क्या इतनी देर तक स्वप्न देख रहा था? नहीं यह स्वप्न कभी नहीं हो सकता; चलो चलें, डेरे पर चल कर रणधीर को सब वृत्तान्त बतावें, वे बड़े बुद्धिमान हैं, देखें इस विषय में क्या कहते हैं॥

(लक्ष्मणसिंह का प्रस्थान)

(मन्दिर का द्वार खोलकर कृत्रिमवेशी महम्मद अली और फतेउल्ला का प्रवेश)

म०। अलाउद्दीन ने और क्या कहा है?

फ०। मुल्लाजी। जानि परत है अब तुम्हार नसीब फिरि-है, और बहुत दिन तुम्हें नैबेद न खाय का होई। जो हि-यां ते अब की बार निकरौं तो जानौं मरैं ते बचेंव, काहे कि तुम्हरे साथ हिंया आएन भातु और रोटी खात २ जान गै। अरे अल्ला हिंया ते कब निकरिबे?

म०। अबे तू हम को क्या आफत में डालेगा? जो ऐसे अल्ला जी और मुल्ला जी कर चिल्लायेगा तो जानेगा। खब-रदार हमें मुल्ला जी न कहना। हमें भैरवाचार्य्य कह कर पुकारा कर।

फ०। का कहिवे? चाचा जो—

म०। अबे! चाचा जी क्या है? कह भैरवाचार्य्य, ए यह तो अच्छी आफत में फँसे॥

फ०। एत्ती बड़ी बात तो मोरे मुंह से निकरबै न करी मैं करौं का ?

म०। हां न निकलैगी ? देखैं इस दफा कैसे नहीं निकलती। तुझे सजा दिए वगैर काम न निकलैगा (प्रहार) कह भैरवाचार्य्य, नहीं तो हड्डियां चूर किए डालता हूं॥

फ०। (रोते हुए) दोहाई मुल्लाजी, कहत हौं, कहत हौं, मरा मरा देखौं कहत हौं—भरू चाचा जो, अरे अल्ला रे! मुल्लाजी तुम तो मारे डारत हौ, अरे अल्ला!

म०। चुप चुप इतना मत शोर कर।

फ०। अरे अल्लारे मरा मरा।

म०। (स्वगत) इसने बड़ी आफत में डाला हमारी भी वैसीही बुद्धि है, गधा पीटने से कहीं घोड़ा थोड़े ही हो जाता है (प्रकाश्य) चुप रह चुप, फिर जो चिल्लायेगा तो—

फ०। मोह ते कहत हो चुप रहु तुम्हरे घूंसन के मारे जो मैं चुप रहै पावं तब न रहंव चाचा जो।

म०। (स्वगत) इसको लाकर तो अच्छे पछताये (प्रकाश्य) सुन तुझ से एक बात कहता हूं—जब हम अकेले होवें तब जो चाहना सो हम को कहना मगर जब और कोई होवे तब खबरदार हम से बात न करना, जो कोई तुझ से कुछ पूछे तो चुप रहना, क्यों समझा न ?

फ०। हां समझो है मुल्ला जी सब समझो है।

म०। अच्छा तो अब बताव अलाउद्दीन ने क्या कहा है?

फ०। (सिर हिलाते हिलाते) जंहूं--जंहूं--जंहूं।

म०। यह क्या? यह क्या?

फ०। तुम जो बातें करैं का मना करि दीन रहेउ।

म०। अबे अभी तो यहां कोई भी नहीं है अभी बात कर जब और कोई यहां होवे तब चुप रहना; खूब हमारी बात समझा था!

फ०। अब को समझी है चाचा जी। अब आप का न बतावे परी।

म०। अच्छा यह जाने दे; बादशाह ने और क्या कहा है बताव तो।

फ०। और का कहिंहैं? उन जौन जौन कही तेइन सो तो हम सब तुम्हैं बताय दीन, बादशाह की भौजी का जो तुम लैकर भाग रहो सो तुम्हारि गर्दन काटैं का हुकुम भा रहै, एई डर ते तुम दस बरस लग भाग भाग फिरेव फिर हिन्दुन का धोखा दैके बांभन बन कै ई मसजिद के मुल्ला बन गएव, तुम तो अच्छी तरह भात खाय कै रहत हौ पर मोह ते नहीं रही जात। और का कहन हियां मसान मां भूतके मारे राति कै नींदी नहीं आवत।

म०। अबे असल बात बतला सटर पटर क्यों बकता है?

फ०। हां हां कहत हौं सुनो न, उन या बात कही हैन कि जो तुम हिन्दुन मा झगड़ा ठाढ़ कर देव तो तुम्हरे सब कसूरन कै रिआयत कीन जई और कुछ बकसीसौ मिली।

जाओं को भी तो चतुर्भुजा देवी दर्शन देती थीं। और यहां यह भी प्रसिद्ध है कि भैरवाचार्य्य जैसे ज्योतिष में निपुण हैं ऐसा कोई नहीं है तो अवश्य लक्ष्मणसिंह दैववाणी का अर्थ जानने के लिये हमारे यहां आवेंगे। और फिर हमारा मतलब सिद्ध होने में कितनी देर लगती है। इस समय सब आयोजन कर रक्खें (फतेउल्ला से) अरे। श्मशान से एक मुरदे का सिर तो ले आ॥

फ०। अरे दइया! आधी राति कै भला हुंआं कोइ ते जावा जात है?

म०। अबे फिर शोर करता है। सीधी तरह कहने से तुझ से काम नहीं निकलता वगैर घूंसा खाए तू काम न करैगा। (स्वगत) इस को लाय कर बड़ी ही आफत में पड़े।

फ०। ए द्याखो जात हौं मुन्नाजो ऐसेउ मरिबे वैसेउ मरिबे; एद्याखो जात हौं मुन्नाजी तनी ठहरो चाचा जी।

म०। सुन, जो कोई मिले तो खबरदार बातें न करना चुप रहना।

(महम्मदअली का मंदिर के भीतर प्रवेश और द्वार बन्द कर देना)

फ०। अरे मुन्नाजो। हमै हियां अकेल छाड़िकै कहां चले गएव? मुन्नाजो। मेहरवानगी करिके याक बार दुआर खो-

ल देव, हमारि छाती धड़कति है, डरू लागत है, ओ मुल्लाजी, ओ मुल्लाजी, ओ चाचा जी।

म०। (मंदिर के भीतर से) गधा के माफिक रेंक मत, जो शोर करैगा तो मजा पावैगा, जब तक मुरदे का सिर नहीं ले आवैगा तब तक दरवाजा कभी न खोलूंगा।

फ०। (स्वगत) अरे दइया! कौनो मुसकिल मां परेंव। (देह कम्पमान) नसीब मां आजु का है? (चमकित होकर) अरे दइया रे! पांयें मां का लाग? ऐसे अँधियारे मां कहां जांवं? मूड़ जो न मिली तो चाचा जी फिर न जियत रखिहैं।

(लक्ष्मणसिंह और रणधीर सिंह का प्रवेश)

ल०। यहीं पर देवी आविर्भूत हुई थीं। रणधीर! यह हमारे चक्षु का भ्रम नहीं है, उस समय हमारी बुद्धि में भी किसी प्रकार व्यतिक्रम न हुआ था। इस समय जैसे तुम्हें स्पष्ट देख रहा हूं वैसे ही देवी के दर्शन हुए थे और आकाशवाणी के छल से जो कुछ उन्हीं ने कहा था, वह अभी तक भी हमारे कान में बसा हुआ है।

रण०। महाराज! कुछ आश्चर्य्य की बात नहीं है। देवतों ने किसी विशेष कार्य्य के लिये आप को दर्शन देकर इच्छा प्रकाश की होगी। आप के धन्य भाग्य जो आप ने उनके दर्शन पाये। आप के पूर्व्वजों में पूजनीय बाप्पा और समरसिंह को भी तो देवी ने दर्शन दिये थे।

ल०। रणधीर! जान पड़ता है कि तुम्हें भी दर्शन मिलेंगे, देखो ठीक इसी स्थान पर उन्हों ने हमें दर्शन दिये थे। (चतुर्भुजा देवी का आविर्भाव और तिरोभाव) ए देखो! ए देखो। ए देखो! रणधीर! नृमुण्डमालिनी, करालवदना देवी चतुर्भुजा, छाया की नाईं, इस समय इधर से उधर चली गईं, अबकी यहां पर देर तक न ठहरीं।

रण०। महाराज! हम ने तो कुछ भी न देखा। जान पड़ता कि है वे और को दर्शन नहीं देतीं। उनके अनुग्रह से आप ने दिव्य चक्षु भी पायीं हैं।

(चतुर्भुजा देवी का आविर्भाव और तिरोभाव)

ल०। ए देखो। ए देखो फिर आईं।

रण०। हां, हां महाराज। अब की बार हम ने भी देखा। (दोनों का साष्टांग प्रणिपात) हमारे भाग्य में तो ऐसा कभी नहीं हुआ। यह क्याही आश्चार्य्य की बात है कि देवी ने हमको भी दर्शन दिये। आः। आज हमारा परम सौभाग्य है। हमारे नयन आज सार्थक हुए, जीवन सफल हुआ, महाराज! चितौर रक्षा के लिये जो दैववाणी हुई थी उसे शीघ्र ही पूरा कीजिये। देवी की कृपा है तो किसी का साहस नहीं कि चित्तौर पर चढ़ाई करै।

ल०। देवी तो अब की बार दर्शन ही देकर चली गईं। एक मुहूर्त भर के लिये भी न ठहरीं। अब उस दैववाणी

का अर्थ हम को कौन बतावैगा ? रणधीर ! हम तो सन्देह में पड़ गये, अब इस से पार होने का तौ कोई उपाय बतावौ।

रण०। चलिये महाराज! एक काम करैं, देखिये सामने ही तो चतुर्भुजा देवी का मन्दिर है, इसके पुरोहित श्री भैरवाचार्य ज्यौतिष शास्त्र में बड़े निपुण हैं। चलिये उन से दैव बाणी का अर्थ पूंछैं॥

ल०। हां यह अच्छी बात होवैगी। चलो वहां चलैं।

रण। महाराज। देखिये क्याही भयानक अन्धकार है, कि हाथ से हाथ नहीं सूझता! इस समय राह मिलना बड़ा ही कठिन है॥

(भय से कांपते २ फतेउल्ला का प्रवेश)

फ०। (स्वगत) अरे बाप रे! बड़ा अंधियारु है! एकु मुरदा का मूड़ तो यो परो है, द्याखौ तो कैसे खीचैं बाये है। जेहका यो मूड़ आय जो वहै भुतौना आय जाय तो २ हमारि जानै जाय। हिन्दू भूत जो मोहि मुसलमान का हियां पइहै तो का जान ते वाकौ रखिहै ? (लक्ष्मणसिंह और रणधीरसिंह को देखकर) अरे दइया रे! ई को आंय! अरे ई द्याखौ कैसे चलत हैं! अरे ई तो ऐसि ही आवत हैं! अरे अल्ला रे! अब कि मरेवं (कांपता है) अरे अब कहां भागौं ?

ल०। देखो देखो रणधीर! यह भूत सा कोई है। अन्धकार में कुछ भली भांति देख नहीं पड़ता किन्तु मुरदा का सिर जान पड़ता है और एक देंह चलती फिरती है॥

रण०। हां महाराज! (तलवार निकाल कर) चलिये उसके निकट चलें।

ल०। रणधीर! वह तो छाया रूपी है, तलवार के मारने से क्या होगा?

रण०। (आगे बढ़ कर) तू कौन है रे? भूत पिशाच वा जो कोई हो हमारी बात का उत्तर दे॥

फ०। (स्वगत) अरे! इनके तो आदमी का अस वदनु आह। वचौं अल्ला, बातें इनते न करौं काहे ते चाचा जी मना कर दीन है न॥

रण०। (निकट आकर) यह क्या? यह तो एक मनुष्य है (प्रकाश्य) तू कौन है? यहां इतनी रात्रि को क्या करने आया है?

फ०। जंहूं, जंहूं, जंहूं जंहूं।

रण०। यह क्या। यह बोलता क्यों नहीं? बोल, नहीं तो अभी तुझ को—(तलवार उठाता है)

फ०। (डर कर और पीछे हट कर स्वगत) अब की मरे व अल्ला (कम्पायमान्)।

ल०। रणधीर! वह डरके मारे बातें नहीं करता। अजी यह तो पुरोहित जी का चेला है (फतेउल्ला से) भैरवाचार्य्य जो मंदिर में हैं?

फ०। हूं, हूं, हूं। (अंगुली से मंदिर की ओर दिखाता है)

रण०। महाराज! तब चलिये चलें (दोनों जा कर मंदिर के द्वार पर खटखटाते हैं)

(मंदिर का द्वार खुलता है और भैरवाचार्य्य का प्रवेश)

(ल० और रण०) भगवन्! प्रणाम।

म०। शुभमस्तु। इतनी रात्रि को यहां? राज्य में तो सब मगल है?

ल०। मगल है वा अमंगल है यही तो जानने के लिये आप के यहां आये हैं।

म०। हमारा परम सौभाग्य है। (फते से) अरे! तीन कुशासन तो ले आ।

(आसन लेकर फते का प्रवेश)

(लक्ष्मणसिंह से) महाराज! बैठिये, मंदिर के भीतर बड़ी गरमी है, इस से बाहर ही आसन डाले हैं।

ल०। यहां भी तो अच्छा है।

म०। कहिये, अब महाराज को क्या आज्ञा है?

ल०। अभी आधी रात को मैं अकेले स्मशान में घूमता था इतने में चित्तौर की अधिष्ठात्री देवी चतुर्भुजा मेरे स-

न्मुख आविर्भूत हुई और एक दैववाणी हुई, उस का अर्थ जानने के लिये मै आप के यहां आया हूं।

म०। कहिये तो, उसका अर्थ मैं अभी बतलाता हूं।

ल०। दैववाणी यह हुई थी।

करत युद्धशय्या हया, यवनन के विपरीत ।
जो तेरे गृह जलजसम, रूपवती सुविनीत ॥
है ललना तेहि रुधिर अति, तात सकै जो टेइ ।
तो चितौर अजयी रहै, नष्ट होय नहिं सेइ ॥
औरहु सुनु तू मूढ़ नर, वाप्पा वंशजराज ।
जो धारत शिर छत्र निज, ताको राखति लाज ॥
द्वादश राजकुमार ते, सकल युद्ध महं नाहिं ।
यवनन ते संग्राम करि, मरि गिरिहैं महि माहिं॥
तौलौं तेरे वंश में, राज सम्पदा कोश ।
रहत न कौनेहु यतन ते, यह मम बानो पोश ॥

इसका पिछला अंश तो हम समझे परन्तु पहिला कुछ भी नहीं समझे। कृपा करके इसका अर्थ हमें समझा दीजिये।

म०। (चिन्ता करते २) हूं! (स्वगत) जो मैं ने सोचा था वही हुआ। अब हिन्दुओं में विवाद करने का अच्छा सुभीता है। "रूपवती ललना" से लक्ष्मणसिंह की कन्या ही का अर्थ है यही कहैं। विजयसिंह सरोजिनी पर अनुरक्त हैं वे उसके बलि दिये जाने में कभी सम्मति न देंगे।

फिर यदि रणधीर सिंह को और दूसरे सेनापतियों को एक बार यह निश्चय विश्वास हो जाय कि सरोजिनी के बलि दिये बिना वे कभी मुसलमानों को पराजय न कर सकेंगे तो सब के सब सरोजिनी के रक्त के लिये उन्मत्त हो जांयगे। फिर यदि समस्त सैन्य की यह सम्मति होगी तो राजा को भी अपनी अनुमति देनी पड़ेगी; और फिर क्या! फिर तो विजयसिंह से विवाद निश्चय ही है। अलाउद्दीन ने जब पहिले चढ़ाई की थी, तब रणधीरसिंह और विजय सिंह ही के बाहुबल से चित्तौर की रक्षा हुई थी अब जो इन में झगड़ा हो जावे तो चित्तौर का निश्चय पतन होगा, और हमारी भी मनोकामना सिद्ध होगी। (प्रकाश्य फते से) खड़िया, फूल और मुरदा का शिर तो ले आ।

(फते का प्रस्थान और खड़िया इत्यादिक ले कर प्रवेश और फिर प्रस्थान)

म० "नमः आदित्यादि नवग्रहेभ्यो नमः" (हाथ मुरदे के शिर पर रख कर) महाराज एक फूल का नाम तो लीजिये।

ल०। सेफालिका

म०। अच्छा।

तन धन सहज मित्र ये चारी।
प्रथम भाग सुन लेहु विचारी ॥

ऐसेहि और हु भागन केरा ।
भाग भाग फल तान घनेरा ॥
यामें बचत दोय भूपाला ।
ताते चहत कुटुम्बहिं काला ॥
अरु शनि राहु कुटुम्ब विराजत ।
भौम दृष्टि तेहि ऊपर छाजत ॥
नहिं शुभ देखत तव घर मांहीं ।
वेगि उपाय करहु शक नाहीं ॥

ल० । क्या कहते हैं शुभ नहीं ? किस का शुभ नहीं यह तो बताइये ।

म० । महाराज ! मैं धीरे २ सब बताता हूं और एक फूल का नाम तो लीजिये ।

ल० । बकुल ।

म० । अच्छा ।

जेहि पुहपक नांऊं, कहं तुम राऊ,
तेहि हम करत विचारो ।
बचि एक जनावत, सुत ग्रह आवत,
क्षीण चन्द्र कर पारो ।
देखहिं तेहि शनि, भूप सरोजिनि,
नाम होय जेहि केरो ।
तेहि रुधिर पियासी, असुरविनासी,
देववाणि कर टेरो ।

ल०। क्या कहते हैं? सरोजिनी पर प्रमाद है? राजकुमारी सरोजिनी पर? हमारी प्राणतुल्य दुहिता सरोजिनी पर?

म०। महाराज! अधीर न होइए, पण्डित लोग शुभ काम के होने से फूलते नहीं, अशुभ काम में अत्यन्त दुःखी नहीं होते। संसार में सुख दुःख ही तो है। ग्रहों के प्रभाव से सब होता है; जो भवितव्य में लिखा है उसे कोई नहीं खण्डन कर सकता।

ल०। महाशय! स्पष्ट २ हम से कहिये कौन सरोजिनी को आप कहते हैं? शीघ्र हमारा सन्देह दूर करिये।

म०। महाराज! अत्यन्त अप्रिय बात आप को सुननी पड़ेगी। पहिले अपने हृदय को सम्हाल लीजिये, मन को दृढ़ कर लीजिये, क्योंकि हमें आशंका होती है कि बात सुनकर आप ज्ञानशून्य हो जाइएगा।

ल०। महाशय! कहिये हम सम्हले हुए हैं शीघ्रही बात कह दीजिये, हम को संशय से संटक न दीजिये।

म०। तब फिर सुनिये, आप की दुहिता राजकुमारी सरोजिनी के रक्तपान बिना देवी चतुर्भुजा कभी न सन्तुष्ट हों गी।

ल०। क्या कहा आप ने? हमारी बेटी सरोजिनी के रक्तपान बिना? (स्वगत) आह! बड़ी भयानक बात है

यह जानने से यदि हम जन्म भर सन्देह सागर में डूबे रहते सोई सहस्र गुण अच्छा था। (प्रकाश) महाशय! आप के गिनने में कहीं भूल हुई होगी। एक बार फिर तो आप सम्हालिये, "जलज सम" का अर्थ पद्मिनी भी तो हो सकता है। क्या जानें उन्हीं से दैववाणी का अर्थ न होय? और वही सम्भव की बात भी है, क्योंकि अलाउद्दीन उन्हीं के रूप पर मोहित हो कर बारम्बार चित्तौर पर चढ़ाई करता है। पद्मिनी देवी जब तक जीती रहेंगी तब तक चित्तौर निरापद कभी न होगा, यही बिचार कर, यह न होय चित्तौर की अधिष्ठात्री देवी चतुर्भुजा ने दैववाणी कही हो।

म०। महाराज! यदि हमारे अङ्क गिनने में किसी प्रकार की भूल होती तो मैं परम आनन्दित होता। किन्तु मैंने इस प्रकार से अङ्क गणना की है कि उस में भूल की किसी भांति सम्भावना नहीं है।

ल०। भगवन्! उस निर्दोषी बालिका ने क्या अपराध किया है जो देवी चतुर्भुजा उस को इस तरुण अवस्था में संसार के सुख सम्भोग करने से वञ्चित करने की इच्छा करतीं हैं? उस के बदले जो देवी मेरे प्राण मांगें तो मैं अभी बिना दुःख देवी के चरण में भेंट चढ़ाने को प्रस्तुत हूं। महाशय! बतलाइये और किस बात से देवी सन्तुष्ट हो सकतीं है? ऐसा करिये जिसमें मैं इस भयानक बिपद से रक्षा पाऊं। आप जो कहियेगा सोई पुरस्कार आपको मैं देउंगा।

म०। महाराज! जो इसका कोई उपाय होता तो मैं अवश्य आप से कहता। पुरस्कार की क्या बात है, भगवान के निकट महाराज की मङ्गल प्रार्थना करना ही तो हमारा काम है।

रण०। महाशय! तो क्या और कोई उपाय नहीं है?

म०। न, और कोई उपाय नहीं।

रण०। महाराज! क्या करियेगा, जब और कोई उपाय नहीं है तो स्वदेश रक्षा के लिये ऐसा निष्ठुर कार्य्य भी करना पड़ेगा।

ल०। क्या कहते हो रणधीर? निष्ठुर कार्य्य! अरे केवल निष्ठुर ही नहीं है, यह अस्वभाविक है। देखो, व्याघ्र जाति कैसे निष्ठुर होते हैं परन्तु तो भी अपने बच्चों की यत्न सहित रक्षा करते हैं, तब क्या राना लक्ष्मणसिंह व्याघ्र जाति से भी अधिक अधम है?

रण०। महाराज! पशुगण प्रवृति के अधीन हैं, किन्तु मनुष्य प्रवृत्ति को वशीभूत कर सकता है, और इसी कारण पशु की अपेक्षा श्रेष्ठ है॥

ल०। हम जन्म जन्मान्तर पशु ही रहैं सो भी अच्छा है परन्तु ऐसी श्रेष्ठता नहीं चाहते।

रण०। महाराज! प्रवृति स्रोत में एक बारगी न डूब जाइये। कुछ धैर्य्य धर सोचिये, कर्तव्य कितना ही कठोर

होय तथापि उसको करना ही होता है। जो और कोई उपाय होता तो महाराज मैं आप को ऐसा कठोर कार्य्य करने को कभी न कहता॥

म०। महाराज! यदि चित्तौर की रक्षा करनो होय, यवनों को जीतने को आशा होय तो देवी जी के बचन को कभी न टालना॥

ल०। महाशय! हमें तो यह विश्वास था कि जो कोई मन्द ग्रह उपस्थित होवैगा तो उस की शान्ति कर दी जायगी। हमारा यह कुग्रह क्या किसी भांति शान्त न होवैगा?

म०। हमाराज! आप को कुण्डली में काल शनि पड़ा है, इस से उद्धार करने को मनुष्य को शक्ति नहीं॥

ल०। जब आप से उद्धार होने को कोई संभावना नहीं तो यहां बैठ कर समय नष्ट करना वृथा है। चलो रणधीर। यहां से चलें, (उठ कर) भैरवाचार्य्य ऐसे सुविख्यात पण्डित होकर भी एक सामान्य बात का उपाय न बतला सके। चलो हम लोग चलें। प्रणाम।

म०। महाराज! मनुष्य कितना ही क्यों न बुद्धिमान हो परन्तु दैव के प्रतिकूल करने की कुछ शक्ति नहीं रखता। अच्छा महाराज आशीर्बाद करता हूं।

ल०। ऐसे शून्य आशीर्बाद से क्या फल है?

(महम्मद का मन्दिर में प्रवेश और लक्ष्मणसिंह और रणधीर सिंह की स्मशान से यात्रा)

रण० । महाराज अब क्या करियेगा कुछ स्थिर किया ?

ल० । अच्छा, तुम जो करने करने की बातें कहते हो, बतलाओ, तुम्ही बतलाओ संतान के विषय में पिता को क्या करना उचित है ? संतान की जीवनरक्षा क्या पिता को न करना चाहिये ?

रण० । महाराज ! आप के प्रश्न का उत्तर जो किञ्चित रूढ़ होय तो क्षमा कीजिएगा । अच्छा हम ने माना कि पिता को सन्तान को रक्षा करना उचित्त है, परन्तु मैं आप से पूछता हूं प्रजा के विषय में आप को क्या करना उचित्त है ? शत्रुओं की चढ़ाई से प्रजा गण जिस में रक्षा पावें इसके यत्न की चेष्टा क्या न करना चाहिये ?

ल० । हां यह करना चाहिये हम स्वीकार करते है; किन्तु जब दोनों बातें करना चाहिये तब तो महा संकट में कुछ नहीं करते बनता । ऐसे समय तो अपनी बिवेचना शक्त्यनुसार ही काम करना चाहिये ।

रण० । नहीं महाराज ! जब दो बातें कर्तव्य हैं जिन का करना परस्पर में बिरोधी है तब यह देखना चाहिये कि कौन गुरूतर है । ऐसे स्थलों में गुरूतर बात का करना और लघुतर बात का छोड़ देना ही योग्य और धर्म्म संगत है ।

ल० । किन्तु रणधीर ! करने में कौन गुरू है और कौन लघु है यह भी तो निश्चय करना बहुत कठिन है ।

रण०। नहीं महाराज! यह तो बहुत सहज बात है। दोनों कामों में जिसके न करने से अधिक हानि होती हो वही गुरूतर कार्य्य है। आप की कन्या के विनाश होने से केवल आप को और आप के परिवार वालों को क्लेश होगा, परन्तु देखिये जो यवन लोग चित्तौर को जीत लेंगे, तो सब राज्य के लोगों को और उन के सन्तानों को दास होने का दुःख भोगना पड़ेगा॥

ल०। रणधीर! तुम्हारी बुद्धि से हम कभी न जीतेंगे। तुम जो कहते हो सो सब ठीक है—किन्तु—किन्तु—

रण०। महाराज। अब "किन्तु" का क्या काम है? युक्ति में जो कार्य्य करना ठीक जान पड़े, वही करना उचित है। देखिये तो ईश्वर ने आप के शिर पर क्या ही भारी बोझ डाला है, लाखों किरोड़ों मनुष्यों का सुख, स्वाधीनता आप के हाथ में है। प्रजातुष्टि के निमित्त राजा को सब त्यागना उचित है! सब क्लेश स्वीकार करना उचित है, देखिये इसी सूर्य्यवंश के पूजनीय राजा रामचन्द्र ने प्रजा-तुष्टि के लिये अपनी प्रियतमा स्त्री सीता जो त्याग दिया। आप भी उसी उच्च वंश के हैं क्या आप उस में कलङ्क लगा-इयेगा?

ल०। रणधीर। बस—बस—अब हमें बहुत न लज्जित करो। तुम हमसे जो करने कहोगे वही हम करेंगे। (च-

तुर्भुजादेवी का आविर्भाव और अन्तर्धान) देखो रणधीर—यह देखो—या आई—क्याही भयानक भृकुटी है! देखो वह चली गई।

रण०। हां महाराज। देखिए।

ल०। तुम्ही अकेले हमें नहीं भर्त्सना करते हो देवी, ने भी भर्त्सना के छल से हम को फिर दर्शन दिये। रणधीर! अब बताओ क्या करना उचित है कैसे सरोजिनी को चित्तौर से बुलवावें? बताओ हम सब बातों में प्रस्तुत हैं॥

रण०। महाराज! एक काम करिये, राजमहिषी को एक ऐसा पत्र लिखिए कि युद्धयात्रा से पहिले कुमार बिजयसिंह सरोजिनी के साथ विवाह करना चाहते हैं इस्से तुम पत्र पहुंचतेही उनको अपने साथ लिये चलो आओ॥

ल०। अच्छा तो चलें डेरे पर जाकर ऐसा एक पत्र लिखें और अपने विश्वासी चाकर सूरदास के हाथ भेज देवें (स्वगत) सरोजिनी कौन है हम तो नहीं जानते? इस संसार में सब माया है, सब भ्रान्ति है, सब स्वप्न तुल्य है। हे महाकाल रूपिनी प्रलयंकरी मातः चतुर्भुजे। तुम्हारे सर्ब संहार कार्य्य करने के लिये हम जाते हैं। सृष्टि लोप हो जाय, पृथ्वी रसातल को चली जाय, महाप्रलय में बिश्वब्रह्माण्डनाश हो जाय। हमारी उस में क्या हानि है? हम से किसी से कुछ सम्बन्ध नहीं।।!

(लक्ष्मणसिंह का सवेग प्रस्थान, फिर रणधीरसिंह का जाना)

(मन्दिर से महम्मदअली और फतेउल्ला का प्रवेश)

म०। हमारा जो मतलब था उसके सिद्ध होने का अच्छा यत्न लगा है। हमने मन्दिर से उनको सब बातें सुनी हैं। राना लक्ष्मणसिंह ने विवाह करने के बहाने से बलिदान के निमित्त सरोजिनी को चित्तौर से बुलाया है। विजयसिंह जहां यह बात सुनेंगे तहां फिर क्या! बड़ाही झमेला मचैगा। यह बात विजयसिंह से बहुत दिन छिपने की नहीं, अब हम इस पत्र को अलाउद्दीन के यहां भेज दें। यहां की सब अवस्था उन को जताना अच्छा है, क्योंकि वे समय से चित्तौर पर चढ़ाई कर सकेंगे (फते से) ओ फते। यह पत्र बादशाह के यहां तो ले जा॥

फ०। कहां जाय कहत हौ? का राति भर हमैं मसान मा घुमइहौ?

म०। अरे यह पत्र बादशाह के यहां लेजा फिर हमलोगों के यहां से निकल चलने का पथ खुल जायगा, समझा, हम भी बच जांयगे तू भी बच जायगा।

फ०। (अह्लादित होकर) हियां ते मैं निकरै पइहौं? खत लाओ चाचा जी हम लिये जात हन। अब तो पट भिर खाय का मिली। हियां तनुक नैवैद मिलति तौ। जब हम अपने देस मां रहन तब अच्छा रहै, पेटु भरि खांय का तो मिलत

रहा, तुम्हरे कहे ते न जानैं काहे चले आएन, बादशाह के हियां न नौकरी मिली न पेटु औ भरा, द्याखो चाचा जो तुम हमार का हाल करि दीन्हो, हमारे खुबसुरत चेहरा का माटो करि दीन्हो, हियां द्याखो मुसलमान का नूर रहै सो तुम वह का मुड़ाय कै मुंडे मा याक पुंछि जमवाय दीन्हो। और वाको का रहा? हियां ते निकरौं तो बचेंव।

म०। अबे अन्तर्वेद में हल चलातेचलाते मर जाता और कुछ न होता अब जहां तूने बादशाह को चिट्ठी दो तहां तुझे बड़ी भारी नौकरी मिलैगी।

फ०। (बहुत प्रसन्न होकर) बड़ा भारी कामु मिली? कौन कामु चाचा जी?

म०। अरे वह फिर तू जानैगा। इस वक्त यह ख़त जल्द ले जा। (पत्रदान)

फ०। हम जात हन चाचा जी हम जात हन, सलाम।

(फते का प्रस्थान)

म०। अब चलैं।

(महम्मद का प्रस्थान)

इति प्रथम गर्भाङ्क।

द्वितीय गर्भाङ्क।

डेरे के भीतर।

(लक्ष्मणसिंह का प्रवेश)

ल०। (स्वगत) हाय हाय! मैंने क्या किया? सूरदास को क्यों पत्र देकर भेज दिया? चित्तौर यहां से तो बहुत दूर नहीं है। अब सूरदास वहां पहुंच गया होगा। और वे सब वहां से चल चुकी होंगी। कहां से मैं रणधीरसिंह की बातों में भूल गया, न जानें क्या है कि रणधीर की बातों में एकबारगी वशीभूत हो जाता हूं? आह। सरोजिनी को व्याहने की वयस है और वह कुमार विजयसिंह को प्राण तुल्य प्यार करती है, उनके साथ अपना विवाह होगा यह सुनकर उसका हृदय कैसा प्रसन्न हुआ होगा परन्तु जब आ कर यहां विवाह के स्थान में बलिदान की सामग्री देखेगी; कुमार विजयसिंह के स्थान में सुनैगी कि उसके पाषण्ड पिता ने यम के साथ सम्बन्ध स्थिर किया है, तब न जाने उसके मन में क्या होगा? आह। जब उसके मन के दुःख को स्मरण करता हूं तब हृदय विदीर्ण होता है, और महिषी भी क्या कहैगी। उनको हम अपना मुख क्योंकर दिखावैंगे? ऊः! असह्य! इस समय यदि रामदास द्वारा उनके यहां यह पत्र भेज सकूं तो उनका आना बन्द हो जाय, जो वे यहां आ गईं तो फिर सरोजिनी का बचना कठिन है।

रणधीरसिंह और भैरवाचार्य्य उसको कभी न छोड़ेंगे। किन्तु इस समय रामदास को भेजना भी तो वृथा है, सूरदास को पत्र ले गये बड़ी देर हुई, अब वे पत्र पाकर चित्तौर से चल चुकी होंगी। रामदास जो अब जायगा तो उनसे भेंट भी न होगी। अब क्या करें? रामदास को बुलावें, वह हमारा बड़ा विश्वासी सेवक है और पिता के समय से चाकर है, देखें वह क्या कहता है। रामदास! रामदास! सुनो तो रामदास।

(रामदास का प्रवेश)

राम०। महाराज क्या आप मुझे बुलाते हैं? सूर्य्य उदय न होतेही होते आपकी निद्रा भङ्ग हो गई? क्या कहीं यवनगण का कोलाहल तो नहीं सुना? समस्त दिन भर की थकी हुई सेना घोर निद्रा में पड़ी है कहिये तो उनको जगा देवें।

ल०। नहीं रामदास। हा। वही मनुष्य सुखी है जिसको राजपद का महान् भार नहीं सहना पड़ता। वही पुरुष सुखी है जो सामान्य अवस्था में है और सुख से अपना कालक्षेप करता है।

राम०। महाराज! आप ऐसी बातें क्यों करते हैं? देवताओं ने आप पर कृपा करके ऐसी राजसम्पदा का अधिकारी किया है तो क्या आपको इसे तुच्छ जानना चाहिये?

आपके यहां किस बात का अभाव है? सर्व लोक पूज्य रघुवंशीय राजा रामचन्द्र के वंश में आपने जन्म लिया है, समस्त मेवाड़ देश के अधीश्वर हैं, घर तेजस्वी पुत्रों से भरा पूरा है, आपके यश से सारी भारतभूमि परिपूर्ण है, और आपको कुमारी सरोजिनी के पाणिग्रहण के अभिलाषी बीर चूड़ामणि बादलाधिपति कुमार विजयसिंहजी हैं, भला इससे और क्या सुख सौभाग्य हो सकते है? मुझे तो दुःख का कोई कारण नहीं दीख पड़ता तो आपको ग्लानि होने का कारण क्या है? आपकी आँखों से विन्दु २ आँसू क्यों गिरते है? मैं आपका पुराना भृत्य हूं, आपको गोद में खिलाया है, मुझसे कुछ न छिपाइयेगा। आपके हाथ में एक पत्र भी दीख पड़ता है, चित्तौर से कोई कुसम्बाद तो नहीं आया? राजमहिषी और राजकुमार तो अच्छे है? राजकुमारी सरोजिनी को तो नहीं कुछ हो गया? बताइये, महाराज! हमसे कुछ न छिपाइये।

ला०। (अन्यमनस्क) वत्से! तेरे बलिदान में मैं कभी न सम्मति दूंगा।

राम०। महाराज! यह क्या? आप यह क्या दुःख की बातें कहते हो?

ल०। रामदास! तो हम तुमको सब बतावें। जब हम चित्तौर से चतुर्भुजादेवी की पूजा करने को यहां आये थे तब की बात हम कहते हैं। सब सेना पथश्रम से क्लान्त हो

कर घोर निद्रा में अचेत सो रही थी, मुझे भी निद्रा आ गई थी। परन्तु एक कुस्वप्न देखने से जग उठा और इतने में स्मशान से "मैं क्षुधित हूं" ऐसा स्वर मेरे कर्ण में आया। स्वर ऐसा विकट था कि मैं तुमसे वर्णन नहीं कर सकता और स्मरण करने से अब भी हृदय कॉपता है। उस समय से मुझे निद्रा न आई और मन में झूठमूठ की विकट शङ्का उत्पन्न होने लगी। इतने में आधी रात्रि हो गई चारो ओर सूनसान हो गया, सब वसुधा निद्रा में मग्न थी, सामान्य भिखारी भी निद्रासुख को अनुभव करता था, परन्तु मुझ को, जिसे तुम परम सुखी, भाग्यवान, सूर्य्यवंशीय रामचन्द्र का वंश और समस्त मेवाड़ का अधीश्वर कहते हो किसी भांति निद्रा न आती थी और केवल वही हतभाग्य सृष्टि भर में जागता था।

राम०। महाराज! यह आप क्या कहते हैं? सब खोल कर कहिये, मुझे शीघ्रही शङ्का से छुटाइये।

ल०। सुनो रामदास। मैं वही विकट स्वर सुन करके स्मशान की ओर चला, थोड़ी देर पीछे वज्र विद्युत हुये; उनमें चित्तौर की अधिष्ठात्री चतुर्भुजादेवी दीख पड़ीं और विकट तथा गम्भीर स्वर से एक दैववाणी हुई। आह! अब भी स्मरण होने से हृदय कॉपता है और उसके अक्षर तो जानो मेरे हृदय में रक्त से लिख गये हैं।

राम०। रक्त से लिख गये हैं? यह आप क्या कहते हैं महाराज?

ला०। हां रामदास। रक्तही से लिख गये हैं, दैववाणी का अर्थ जानने के लिये हम और रणधीरसिंह भैरवाचार्य्य के यहां गये उन्होंने जैसी व्याख्या की वह कहतेही हमारा हृदय विदीर्ण होता है। उन्होंने यह कहा कि सरोजिनी के बलिदान दिये बिना चित्तौर को किसी भांति रक्षा नहीं हो सक्ती। और बाप्पावंश के द्वादश राजकुमार जब तक यवनसंग्राम में न मरेंगे तब तक हमारे वंश में राजलक्ष्मी कभी न रहैगी। रामदास! मेरे पुत्र युद्ध में प्राण देंगे इससे मैं इतना कातर नहीं होता क्योंकि युद्ध में मरनाही तो क्षत्रियों का प्रधान धर्म्म है, परन्तु तुम्हीं कहो रामदास। हम अपनी स्नेहमयी सरोजिनी को क्योंकर बलिदान दें?

राम०। ऊः। क्याही भयानक बात है! महाराज आपने अभी सम्मति तो नहीं दी है।

ल०। सम्मति? ऊः यह बात न पूछो; रामदास। हमारे सदृश मूढ़ और दुर्बलचित्त पुरुष संसार में दूसरा नहीं है। हम पहिले किसी भांति सम्मति न देते थे परन्तु रणधीर ने, कठिन बज्रवत् रणधीर ने, इस बलिदान के पक्ष में ऐसी २ बातें कहीं कि हम उनका उत्तर न दे सके और हमें सम्मति देनीही पड़ी। फिर जब देवी चतुर्भुजा मुझे भर्त्सन करने को भृकुटी विस्तार किये आईं तब कोई उपाय न रहा।

राम०। महाराज! न जानैं देवी आप पर क्यों इतनी निर्दय हैं कि ऐसा भयानक आदेश दिया है! जीवित रहते क्या कोई भी अपनी पुत्री को बलिदान दे सक्ता है? महाराज आपने बलिदान में तो सम्मति दे दी है तो अब क्या करना उचित है?

ल०। केवल सम्मतिही नहीं दे दी है, रणधीर की बातों से उत्तेजित होकर हमने उसी समय सरोजिनी के बुलाने को एक चिट्ठी भी राजमहिषी को लिख भेजी। और चिट्ठी में यह छल किया है कि कुमार बिजयसिंह युद्धयात्रा के पहिले पाणिग्रहण करने को उत्सुक हैं इस से उसको शीघ्रही यहां लेवाय आवैं।

राम०। परन्तु महाराज! आप बिजयसिंह से भय नहीं खाते? आप क्या जानते हैं कि जब वे यह सुनैंगे कि विवाह के छल से ऐसी हत्या का सङ्कल्प किया गया है, तब वे चुपचाप बैठे रहैंगे?

ल०। रामदास! बिजयसिंह के आने के पहिलेही मैंने पत्र लिख भेजा था, मैं नहीं जानता था कि वे इतना शीघ्र लौट आवैंगे, उनके पिता ने किसी निकटवर्त्ती शत्रु के विरुद्ध युद्ध करने के लिये उन्हें भेजा था, मैंने जाना कि उनके लौटने में कुछ दिन लगैंगे, परन्तु इनकी गति कौन रोक सक्ता है? ज्योंही इन्होंने युद्ध में प्रवेश किया वैसेही विजयलक्ष्मी ने इन

को आलिङ्गन किया; और ज्योंही इनको जय बार्ता यहां सुन पड़ी वैसेही ये भी आ गये।

राम०। महाराज। यदि वे यहां आ गये हैं तो अब कुछ डर नहीं है, आप यदि सरोजिनी के बलिदान दिये जाने में सम्मत भी होंगे तो भी वे आपके प्रतिबन्धक होंगे।

ल०। रामदास! तुम क्या जानै क्या कहते हो? बिजयसिंह ऐसे जो सहस्र वीर पुरुष एकत्र होंय तो भी हमारे प्रतिबन्धक नहीं हो सकते! हमारा प्रतिबन्धक हमारे स्वभाव भिन्न और कोई नहीं है। स्वभावही के दृढ़तर बन्धन ने हमारे हाथ को बाँध रक्खा है। देखो रामदास! जिसके मुख को जो हम थोड़ा भी मलिन देखते हैं तो हमारे हृदय में सैकड़ों शैल चुभते हैं ऐसी सरोजिनी का हमारे मिलने के लिये हृष्टचित्त से और द्रुत गति से आना, और उसका यहां अपनी वत्सु के लिये भीषण सामग्री प्रस्तुत पाना यह क्याही भयानक बात है। हमारी सरला सरोजिनी स्वप्न में भी यह न देखती होगी कि कैसी भयानक विपत्ति उसके लिये प्रतीक्षा कर रही है, वह अपने पिता के स्नेह निमग्न से कितनी प्रसन्न हुई होगी। देखो तो रामदास। दुहिता पद के उच्चारण मेंही पिता के हृदय में क्याही एक अपूर्व वात्सल्य भाव उदय होता है, फिर हमारी सरोजिनी तो दुहिता का आदर्शस्वरूप है, हमको कितना प्यार करती है, कितनी हम पर उसकी भक्ति है, और कितना हमको

मानती है कि एकबार भी कभी हमारी बात को नहीं टाला और फिर देखो अर्द्धप्रस्फुटित कमलकलिका की नाईं अभिनव यौवन-श्री से विभूषित हुई है । ऊः ! इन सब बातों के स्मरण होने से, हा !—

राम० । ऊः ! क्याही भयानक बात है महाराज! ऐसा तो हमने स्वप्न में भी नहीं सोचा था ।

ल० । (स्वगत) मातः चतुर्भुजे ! आप इस निष्ठुर बलि की इच्छा करती हैं यह हमें कभी विश्वास नहीं होता; हमें जान पड़ता है कि आपने हमारी परीक्षा लेने के लिये ऐसा आदेश दिया है । (प्रकाश) रामदास ! तुम हमारे विश्वासी हौ इससे हमने सब खोलकर तुमसे कह दिया देखो यह बात प्रकाश न हो ।

राम० । महाराज । इस बात से आप निश्चिन्त रहिये, हमारे द्वारा कुछ प्रकाश न होगा; परन्तु राजकुमारी के जीवन की रक्षा का कोई उपाय हो तो शीघ्र सोचिये ।

ल० । देखो रामदास ! हमने जो पत्र सूरदास के हाथ महिषी के यहां भेजा था, वह जो पहुंचा होगा तो वे सरोजिनी को लेकर चित्तौर से चल चुकी होंगी, और जहां वे यहां आ गईं फिर रक्षा का कोई उपाय नहीं । परन्तु यदि तुम उनके यहां न आतेही आते पथ में महिषी को यह पत्र दे सको तो उनका यहां आना बन्द हो सकता है ।

राम० । महाराज । पत्र लाइये मैं अभी लिये जाता हूं ।

ल०। ये लेव (पत्रप्रदान) देखो शीघ्र जाव, पथ में कहीं भी विश्राम न करना।

राम०। महाराज। मैं अभी जाता हूं, और चिट्ठी महिषी के दिये बिना कहीं विश्राम न करूंगा।

ल०। और सुनो रामदास! एक जन निपुण पथदर्शक अपने साथ ले जाओ जिसमें पथभ्रम न होय क्योंकि यदि महिषी तुमको पथ में न मिलीं और सरोजिनी यहां आ गई तो सर्वनाश हो जायगा। भैरवाचार्य्य सब सेना को दैव-वाणी का अर्थ बताय देंगे और सारी सैन्यमण्डली सरोजिनी के रक्त के लिये उत्तेजित हो जायगी; जो लोग हमारे गौरव पर ईर्षा करते हैं वे अवसर पाय कर विरोध खड़ाकर देंगे; तब फिर हमको अपनी प्रभुता और राजरक्षा करनी बड़ी कठिन हो जायगी। हमने तुमसे सब हृदय की बात खोल कर कह दी, अब जाव और देखो देरी न करना।

राम०। महाराज! यदि हम पत्र का मर्म्म जानते होते तो अच्छा न होता! क्योंकि यदि हमारी बात और उसमें कुछ न मिला तो—

ल०। हां हां। ठीक कहते हो। पत्र का मर्म्म जानना तुम्हें आवश्यक है। मैंने राजमहिषी को इस प्रकार से लिख दिया है कि कुमार विजयसिंह की मति बदल गई है और वे सरोजिनी को व्याहने के लिये जितने उत्सुक थे उतने अब

नहीं हैं, इसलिये उसके ले आने को कुछ आवश्यकता नहीं है। और यह भी कह देना कि सुना जाता है कि बिजयसिंह जिस यवनयुवती को प्रथम चित्तौर की लड़ाई में बन्दी कर लाये थे, उसी पर अधिक अनुरक्त हैं यह बात कहने से अच्छा होगा। किसके पैर का शब्द है? यह क्या! यह तो बिजयसिंह इधर आते हैं, जाओ, जाओ रामदास, शीघ्र जाओ, देरी न करो, बिजयसिंह के साथ रणधीरसिंह भी तो आते हैं।

(रामदास का प्रस्थान)

(बिजयसिंह और रणधीरसिंह का प्रवेश)

ल०। बिजयसिंह! तुम बड़ी शीघ्र युद्ध में जयलाभ करके लौट आये? धन्य तुम्हारा विक्रम! जो काम बहुतों के लिये दुःसाध्य है वह तुम्हारे लिये बालकों की क्रीड़ा की नाईं सामान्य और सहज है।

बिजय०। महाराज! इस सामान्य जयलाभ में कोई विशेष गौरव नहीं है; भगवान करे इससे अधिक गौरवतर क्षेत्रों में हमलोग जयलाभ करें। इस बार जो यवनों के विरुद्ध जय लाभ कर सकूं, चित्तौर की रक्षा कर सकूं, अपने पितृव्य भीमसिंह के अपमान का प्रतिशोध कर सकूं, यदि उस लम्पट अलाउद्दीन का मस्तक अपने हाथ से काट सकूं, तो मेरी मनोकामना पूर्ण होय। (थोड़ी देर निःस्तब्ध रह

हुआ है - नहीं हम जब एक बार वचन दे चुके तब उपाय नहीं। किन्तु रणधीर! तुम भी तो पिता हो - इस अवस्था में पिता का कैसा मन होता है यह क्या तुम कुछ भी नहीं जानते?—इस समय कैसे हो!

रण०। महाराज। सत्य है मैं भी पिता हूं—पिता के हृदय का भाव मैं भली भांति जानता हूं। आप को जो आघात लगा है उस से मेरा अन्त:करण भी व्यथित होता है। रोने के लिए आप को दोष देना दूर रहा—परन्तु मैं भी अश्रुनिपात करने से अपने को नहीं रोक सकता। किन्तु महाराज! आप को यह विवेचना करनी चाहिये कि स्नेह के उपरोध से आप को क्या दैववाणी की अवमानना करनी चाहिये? देखिए सरोजिनी भी यहां आगई है, भैरवाचार्य्य इसी की प्रतीक्षा कर रहे हैं, और जब सुनेंगे कि सरोजिनी आगई, तब स्वयं यहां आकर उपस्थित होंगे। इस समय हम दोही जन यहां पर हैं इसी अवसर में अश्रुवर्षण करके हृदय का भार अच्छी प्रकार लघु कर लीजिये, फिर समय न मिलेगा; आप के इसी अश्रुवारि सिंचन से भारत का गौरवबीज अंकुरित होगा। महाराज। देखिये म्लेच्छ लोगों ने हमैं आक्रमण किया है—हमारी स्वाधीनता नष्ट करने पर उद्यत हैं—हमारे देवताओं की अवमानना करते हैं—हमारे सनातन धर्म के लोप करने की चेष्टा करते हैं-हमारे महिला गण के सतीत्व पर्य्यन्त नष्ट करने के हात

संकल्प हैं। महाराज! जब यह स्वार्थपर, देवद्वेषी, इन्द्रियपरायण, म्लेच्छ राज अलाउद्दीन, पद्मिनी देवी का सतीत्व नष्ट करने को साहसी हुआ था तब निराश्रय, दरिद्र, सामान्य राजपूत महिलागण का सतीत्व निरापद रह सकता है? महाराज! प्रजा पुंज में समस्त नर नारी प्रजावत्सल राजा के पुत्र कन्या तुल्य हैं; अतएव यदि आप की एक दुहिता के बलिदान से शत सहस्र पुत्र स्वाधीनता पाते हों, और शत सहस्र दुहिताओं का सतीत्व रक्षित होता हो, तो आप कुंठित होइएगा? नहीं, आप को तो और सौभाग्य समझना चाहिये। देखिये राजपूताना के प्रधान २ वीरगणने मातृभूमि के निमित्त अस्त्र धारण करके आप को सेनापति बनाया है—तब उन से आप क्या कहियेगा कि—लौट जाओ—जन्मभूमि के उद्धार के निमित्त मैं अपनी दुहिता को चतुर्भुजा देवी के चरणों पर कभी न उपहार दूंगा? नहीं महाराज! आप को ऐसा करना चाहिये कि जिस में देवी चतुर्भुजा परितुष्ट हों और उनकी अमोघ कृपा से मुसलमान लोग मातृभूमि से शीघ्र ही दूर कर दिये जांय इस से आप का निश्चय ही गौरव होगा और सब राजपूत वर्ग आप के निकट चिरकाल के निमित्त कृतज्ञता पाश में आवद्ध रहेंगे।

ल०। (स्वगत) अब और कोई उपाय नहीं है मैं जानता हूं कि मैं जितनी उसके बचाने की चेष्टा करूंगा, सब

हथा होगी। देवी चतुर्भुजे! एक निर्दोषी अबला के रक्त पान बिना तुम्हारी प्यास क्या और प्रकार से निवारण नहीं हो सकती? हा! (कियत् काल पर रणधीर से) अच्छा तुम अग्रसर हो, मैं शीघ्र ही उसको लिये आता हूं। किन्तु रणधीर! भैरवाचार्य्य से अच्छी प्रकार कह देना कि बलिदान की बार्ता और कोई न जानने पावै; और विशेष कर यह बात राजमहिषी के कर्ण तक न पहुंचे; यदि उन्हों ने सुन लिया तो घोर बिपद उपस्थित होगी; रणधीर! मैं अब अपने संकल्प में दृढ़ हूं, परन्तु केवल राजमहिषी ही का डर है॥

रण०। महाराज! आप भय न करिये, यह बात और कोई न जानने पावैगा; – मैं अब जाता हूं॥

(रणधीरसिंह का प्रस्थान)

ल०। (स्वगत) हिमाचल! विंध्याचल। तुम अपने कठिनतम दुर्भेद्य पाषाणों से मेरे हृदय को परिणत करो; परन्तु नहीं,—तुम भी इतने कठिन नहीं हो तुम्हारा भी हृदय दुर्ब्बल है,–तुम भी गलित तुषाररूप अश्रुवारि बर्षण करके अपनी कोमलता का परिचय देते हो। जगत में यदि और कोई कठिनतर सामग्री होवै,—लौह, बज्र आओ—किंतु नहीं चाहै पाषाण होवै लोह होवै, वा बज्र होवै, सब सैकड़ों टुकड़ों में बिदीर्ण हो जावेंगे जिस समय वह निर्दोषी सरला बाला एक बार करुणस्वर से पिता कहकर

सम्बोधन करैगी। हा! मैं अब क्या पिता नाम के योग्य हूं? मैं क्या सरोजिनी का पिता हूं?—नहीं—मैं उसका पिता नहीं हूं-मैंउस का कृतान्त हूं-अति दारुण निष्ठुर कृतान्त हूं॥

(लक्ष्मणसिंह का प्रस्थान)

॥ इति द्वितीय गर्भाङ्क ॥

॥ प्रथम अंक समाप्त ॥

द्वितीयाङ्क।

प्रथम गर्भाङ्क।

स्थान दिल्ली – राजमहल।

(बादशाह अलाउद्दीन, वज़ीर और मुसाहिब बैठे हुए हैं)

अला०। वज़ीर! महम्मद जो भेष बदल कर चित्तौर में हिन्दुओं के मंदिर का पुरोहित बना है, उसके यहां से अभी तक कोई ख़बर नहीं आई। अब क्या करना चाहिये? उसकी राह न देख कर चित्तौर पर चढ़ाई न कर दें?

वज़ीर। जहांपनाह! ग़ुलाम की राय नाकिस में तो यह आता है कि उसकी राह अभी देखिये। आज वहां से एक आदमी आनेवाला है। हिन्दुओं में महम्मदअली की इतनी इज्जत है, और वह इतना होशियार है कि ज़रूर ही उन में बाहम फ़साद करादेगा। ख़ासकर उन में बिजयसिंह और रणधीरसिंह बड़े शुजाअ हैं, जो इन में किसी

तरह से झगड़ा हो जाय तो चित्तौर सहल में हमारे साथ आ जाय। हुजूर को याद होगा कि उस बार इन्हीं दो आदमियों की बहादुरी से चित्तौर महफूज रहा था॥

अला०। क्या कहते हो वज़ीर! इन्हीं की बहादुरी से चित्तौर महफूज़ रहा था। अरे। हिन्दुओं में बहादुरी! हम अगर चाहते तो चित्तौर को उसी दफ़ा तबाह कर डालते॥

वज़ीर। इस में क्या शक है! आप के नजदीक क्या मुहाल है! आप के जेहन में अगर समावै तो वल्लाह आलम क्या से क्या हो जावै॥

प्र० मुसा०। खुदावन्द! आपने तो मेहरबानी करके उस दफ़: हिन्दुओं को छोड़ दिया था॥

द्वि० मुसा०। दरीं चे शक?

अला०। लेकिन उस दफ़: वह मक्कार हिन्दू बेगम पद्मिनी फिक्र करके अपने शौहर भीमदेव को कैद से छुड़ा-ले गई थी। हम जानते थे-उसके साथ जितनी पालकियां थीं उन में उसकी खादिमें और जलीस होंगी, मगर उनमें से तो एकबारगी राजपूत और मुसल्ल: सिपाह निकल पड़े। तकदीर से हम लोग सब उस रोज होशयार थे और फौज भी बहुत थी, नहीं तो –

वज़ीर। जहांपनाह। वह दिन तो बड़ा ही खौफ़नाक हुआ था॥

अला०। देखो वजीर! इस मर्तबः चित्तौर जा कर उसका बखूबी बदला लेना होगा। देखेंगे कि इस बार पद्मिनी अपनी असमत कैसे बचावैगी? हम ने कितना हिन्दू राजा से कहा कि पद्मिनी हम को दे दे और तू बे-खौफ़ राज कर लेकिन वह किसी बात में न राजी हुआ। अब इस बार देखेंगे॥

प्र० मुसा०। पीर मुरशिद! पद्मिनी की क्या असल है, हुजूर का हुक्म हो तो मैं हूरे जन्नत ले आऊं। शहर चित्तौर में ज्योंहीं आप दाखिल हुए, फिर देखियेगा कि एक क्या सैकड़ों पद्मिनी आप के क़दमबोस होंगीं॥

अला०। (हँसकर) अच्छा इसका एहतमाम तुम्हारे ही जिम्मे रहैगा, क्योंकि इस मारके के बहादुर तुम्ही हो॥

प्र० मुसा०। गुलाम पर आप ने बड़ी इनायत की। अगर हुजूर खानेजाद को कुल खजाना शाही भी अता फ़रमाते तो भी मैं इसना खुश न होता, खुदावन्द मेरी बहादुरी देखेंगे क़सम कुरान शरीफ की वहां एक भी औरत न बचैगी कि जिसको अपनी पाकदामिनी का गुरूर हो। (हाथ जोड़ कर) बे अदबी मुआफ, चित्तौर पर कब हमला होगा?

अला०। चे खुश! अब ताम्मुल आप को नागवार है॥

प्र० मुसा०। जहांपनाह! मेरी तो यह राय है कि दर कार खैर हाजत हेच इस्तखारः नेस्त॥

अला०। अच्छा यह तो बताओ कि इस पीरान: साली में लड़ाई के लिये जो जोश-शबाब तुम ज़ाहिर करते हो इसका क्या सबब है?

प्र० मुस०। वली नियामत! उम्र तो कुछ अभी इतनी नहीं हुई है, इन्तिहा साठ होगी। और उस पर आप ने मुझे इतना बड़ा ओहद: इनायत फरमाया है कि जिस में मैं नए सिरे से जवान हो जाऊंगा। अगर ऐसे काम में बदिल व जान सायी न हूं तो फिर किस में—?

अला०। अच्छा २ सुनो वज़ीर। इस मरतब: तमाम कमाल हिन्दू माविद मुनहदिम कर डाले जांयगे, ताकि उनका नाम व निशान तक बाकी न रहै॥

वज़ीर। हुज़ूर! वाकई काफ़िरों के हक़ में ऐसा ही सुलूक बेहतर है॥

सब मुसा०। बजा है, दुरुस्त है, दरीं चे शक?

द्वि० मुसा। हमारे बादशाह दीन इसलाम के हामीय सादिक़ हैं।

त्रि० मुसा०। हमारे बादशाह सा दूसरा मुसलमान दुनियां में दूसरा न होगा।

(एक रक्षक का प्रवेश)

रक्षक। खुदावन्द! हिन्दू मन्दिर से एक आदमी आया है, और हुज़ूर की क़दमबोसी की तमन्ना रखता है।

अला०। अच्छा, उसे हाज़िर करो।

रक्षक। बहुत बेहतर हुजर। (रक्षक का प्रस्थान)

(महम्मद अली के चाकर फते का प्रवेश)

अला०। क्या ख़बर है?

फते। (कम्पमान)

अला०। अबे, इतना कांपता क्यों है? बात का जवाब क्यों नहीं देता? वज़ीर! कोई ख़राब ख़बर तो नहीं है?

वजीर। जहांपनाह! यह गंवार किसान है, और बादशाहों के सामने किस तरह गुफ़तगू करनी चाहिये नहीं जानता, इसी से डरता है।

अला०। अबे! क्या ख़बर लाया है बोल डर मत कुछ डर की बात नहीं है।

फते। चाचा जी तुमका यो ख़त दीन हैं (पत्र प्रदान)

वज़ीर। अबे बेअदब! जहांपनाह कह।

अला०। वज़ीर! जो उसके दिल में आवे कहने देव, मुबादा ख़ौफ़ से कुछ भी न कह सके। (फते से) यह ख़त किसने भेजा है?

फते। चाचा जी दीन रहैन।

अला०। चाचा जी कौन हैं?

फते। तुम पंच जेहका महम्मद अली कहत हौ, वोह का हिन्दू भरू चाचा कहत हैं।

अला०। वज़ीर! देखो तो इस ख़त में क्या लिखा है?

(पत्र प्रदान)

वज़ीर। (पत्र पाठ।)

बइज्ज़े अज़ हज़रत ज़िल्लेसुभानी ख़लीफ़:तुर्रहमानी ख़ुदावन्द ख़ुदायगान शहंशाहे आलमोआलमियां दाम मुल्कहू वो सलतनत हू मीरसानद—

कि फ़िदवी जांनिसार हस्बुलहुक्म क़ज़ा शियम बिनाय फ़साद मावैन कुफ़राने बदनिहाद मुसतहकम् साख़त:, मुंतजिर वक़्ते अम कि शोलए जदालोक़ताल दरमियान आंहां गर्म शवद, आं ज़मां अर्ज़ी इत्तिलाई रवान: ख़िदमत फ़ैज़ दरजत ख़ाहमनमूद व यक़ीन वासिक़ अज़ जनाब अहदि यत आं दारम कि हमल: हुज़ूर दरीं हालत बिसियार मुवस्सर ख़ाहदशुद व फ़तेह चित्तोर बसेहलुलवजूह बदस्त ख़ाहदआमद, आइन्द: उम्मेदवार मराहिम सुलतानी आंनस्त कि ताहुसूल शरफ़ क़दमबोस अज़ यहकामाते लायक़: मुअज्ज़ज़ व मुफ़ख़्ख़र मेंशुद बाशद।

अर्ज़ी ख़ानेज़ाद जांनिसार

महम्मदअली *

* अर्थ यह है कि मैं ने हिन्दुओं में झगड़े की जड़ डाली है और जब वह आपस में लड़ने लगेंगे तब सम्बाद दूंगा आशा है कि उस समय की चढ़ाई से चित्तौर का पतन हो जाय॥

अला०। यह तो उमदा ख़बर है, वज़ीर! उसको कुछ इनाम देकर रुख़सत करो।

वज़ीर। बहुत बहतर, ओ बे! हमारे साथ इधर आ।

फते। (स्वगत) बकसीस! जो अब चारि गांठै पियाज, और पुलाव खांय का मिलै तो बड़ा मजा होय। हिन्दुन मां नैवेदि खात खात जान गै है।

(वज़ीर और फते का प्रस्थान)

प्र० मुसा०। (स्वगत) अब अच्छा हुआ जब तक यह वज़ीर रहता है, काम काज की बातें छोड़ कर कोई बातें ही नहीं होने पातीं। (प्रकाश्य) हुज़ूर। बेअदबी माफ़ गुलाम की आप से एक अर्ज़ है। जो हुक्म होय तो अर्ज़ करूं॥

अला०। अच्छा कहो क्या?

प्र० मुसा। जहांपनाह! वज़ीर साहब तो आप के सामने वक़्त हो या बे वक़्त अपना ही झगड़ा नाधते हैं और फिर उठने का नामही नहीं लेते। भला जब दरबार होता है तब तो उनका अख़तियार है, तब जो चाहै सो करैं, मगर यह वक़्त ख़ास आराम और गप्प करने का है, इस वक़्त भी वे काम काज ही लेकर बैठ जाते हैं॥

अला०। (हँस कर) हां हां, हमने जाना जब वज़ीर नहीं रहते हैं, तब तुम्हें आराम मिलता है॥

प्र० मुसा०। (हाथ जोड़ कर) जी बेजा है लेकिन सिर्फ़ हमीं को नहीं, बल्कि हुजूर को भी॥

अला०। तुम्हारे साथ गुफ़्तगू में पेश पाना मुश्किल है, अच्छा बताओ अब क्या किया जाय?

प्र० मुसा०। हुजूर। आज ऐसी अच्छी ख़बर मिली है। इस दम जो कुछ जलसाये रक़्स वो सरोद न हो वह थोड़ा है और तायफ़े भी हाजिर हैं फ़क़त हुक्म की देर है।

अला०। अच्छा बुलाओ।

प्र० मुसा०। बहुत खूब।

(प्रथम मुसाहिब का प्रस्थान और नर्तिकीगण को लेकर फिर प्रवेश)

(नृत्य और गीत)

सम्हालो तेग़ अदा को ज़रा सुनो तो सही।
किसी की आ न गई हो क़ज़ा सुनो तो सही॥
लगा के मेंहदी न तुम दिल को पायमाल करो।
किसी का खून करेगी हिना सुनो तो सही॥
गज़ब है तुम को खुले बन्द देखें बेमहरम।
वह अगली क्या हुई शरमो हया सुनो तो सही॥
तलब रक़ीब ने बोसा किया तो कुछ न कहा।

हमी से होगये उलटे ख़फ़ा सुनो तो सही ॥
लड़ाई हो चुकी बस दूर भी करो क़िस्सा ।
मिलो वहोद से बहरे खुदा सुनो तो सही ॥

॥ इति प्रथम गर्भाङ्क ॥

द्वितीय अङ्क ।

द्वितीय गर्भाङ्क ।

राणा लक्ष्मणसिंह के डेरों के निटक उद्यान ।

(रोशनयार और मुनिया का प्रवेस)

रोशन० । आओ बहन ! यहां पर थोड़ी देर घूमैं देखो तो यह बागीचा कैसा सूनसान है; अब राजकुमारी सरोजिनी को अपने पिता से भेट करने देव, बिजयसिंह से मुलाक़ात करने देव, हम वहां जाकर क्या करैंगी ? आओ हम लोग जी खोलकर बातैं करैं । देखो बहन मेरा तो यह इरादा होता है कि रात दिन इसी पेड़ के तले बैठी रहूं-सुनो तो क्याही सांय सांय की आवाज निकल रही है, मुझे तो यह बहुत ही अ ी मालूम पड़ती है ।

मुनिया । बहन तुम आज कल ऐसी रंज में क्यों रहती हो ? तमाम दिन अकेली बैठी बैठी रोती हो, किसी से न बोलो न चालो इसके माने क्या है ? बहन मुझे वह दिन अच्छी तरह याद है, जिस दिन हिन्दुओं ने हमारी फ़ौज

को जीत कर तुम को कैद कर लिया और वह फ़तेयाब राजपूत खून से नहाया हुआ तुम्हारे सामने आ खड़ा हुआ तब तो तुम्हारी आंखों से एक भी आंसू न गिरा अब सारे दिन रोती हो; अब तो सब कोई तुम्हें अ-ी तरह रखते हैं, राजकुमारी सरोजिनी तुम को जी से प्यार करती हैं तुम को अपनी बहन सी ख्याल करती हैं और रहने के लिये एक अलग घर बनवा दिया है। फिर देखो वह हमें प्यार करती हैं इस से हमें कोई मुसलमान जान कर भी हिकारत नहीं कर सकता। अब तो बहन हमें तुम्हारे रंजीदा होने का कोई सबब नहीं दीख पड़ता।

रोशन०। तुम क्या कहती हो कि मेरे रंजीदा होने का कोई सबब नहीं है? बताओ तो मेरे बराबर कौन कमबख़त है? लडकपन से गैर लोगों में रही हूं; वालदैन का प्यार किस तरह का होता है मैं ने कभी न जाना, और वे कौन थे यह भी नहीं जानती; एक नजूमी ने एक बेर यह तो बताया था कि जिस बक़त उनको जानूंगी उसी समय मेरी कजा होवैगी।

मुनिया। बहन। ऐसी बुरी बात मुंह में न लाओ। नजूमियों की बातों के अकसर दो माने होते हैं, क्या जानें उसके और कोई माने होंय?

रोशन०। नहीं मेरा ऐसा हाल है कि इस से मरना ही अच्छा है। देखो सखी तुम्हारे बाप हमारा सब हाल जानते

थे एक बेर यह भी कहा था कि सब हम से अकेले में बयान करेंगे लेकिन हम ऐसी बदबख्त हैं कि वे भी न रहे कुमार बिजयसिंह के हाथ जंग में मारे गये, और उसी दिन मैं भी कैद हुई।

मुनिया। बहन हमारी किस्मत में जो था वह हुआ, अब इस वक्त बे फ़ायदे रंज करने से क्या होगा! हमने सुना है कि यहां हिन्दूमंदिर में एक पुरोहित है, वह नजूम से सब सवालों का जवाब बतला देता है। चलो न उसके यहां एक दिन छिप कर चलें शायद वह तुम्हारा सब हाल बता-दे, और फिर कुमार बिजयसिंह ने यह भी तो कहा था कि जब उनका और सरोजिनी का ब्याह हो जायगा तब वे हम लोगों को छोड़ देंगे और वतन भेजवा देंगे सो अब ब्याह होनेवाला है।

रोशन०। क्या कहती हो सरोजिनी के साथ बिजयसिंह का ब्याह? हा क्या सुना। क्या सब ठीक हो गया? बहन तुमने यह बात मुझ से पहिले क्यों न कही?

मुनिया। बहन मैंने भी तो यह जिकर अभी सुना है तुमसे पेशतर क्या कहती?

रोशन०। मैं सिर्फ यही जानती थी कि महाराज ने सरोजिनी को बुलाया है लेकिन इसकी कुछ भी खबर न थी कि किस वास्ते। हां, इतना बेशक मालूम होता था कि सरोजिनी के लिये कोई खुशखबरी है।

मुनिया। बहन यह तो बतलाओ कि इस खबर को सुन कर तुम इतनी घबड़ा क्यों गईं ?

रोशन०। अगर मैं अपनी सब तकलीफ़ों से इस बिवाह को ज्यादः समझूं तो क्या यह कुछ तअजुब की बात है ?

मुनिया। बहन, यह तुम क्या कहती हो ?

रोशन०। हाः। मुझे जो कुछ रंज है उसे तू बिलकुल नहीं जानती, और जब उसे सुनेगी तब तुझे यही तअजुब होगा कि ऐसे रंज को बरदाश्त करके भी मैं अभी तक जिन्दा हूं। मैं यतीम हूं यह मेरे रंज का सबब नहीं है; मैं दूसरे के ताबअ हूं यह भी मेरे रंज का सबब नहीं, मैं कैदी हूं यह भी मेरे रंज का सबब नहीं है लेकिन मेरे रंज का सबब मेरा दिलही है! बहन तू यह सुन कर दमबखुद हो जायगी कि वही मुसलमानों का कातिल कुमार बिजयसिंह जो मेरी सब तकलीफ़ों का बाइस है, जिस बे रहम ने हम लोगों को कैदी बनाया है, जो बदज़ात काफ़िर है, जिससे हम लोगों से कुछ रिश्ता नहीं और जिसका नाम भी सुनने से हम लोगों के दिल में कराहियत पैदा होनी चाहिये वही खूंखार दुश्मन मेरा—

मुनिया। यह क्या बहन। बोलते २ चुप क्यों हो गईं ?

रोशन०। बहन, वही खूंखार दुश्मन मेरा दिल व जान और बायस ज़िन्दगी है।

सुनिया। यह क्या कहती हो बहन! इसको तो मैं जरा भी नहीं जानती थी।

रोशन०। सखी! मैंने सोचा था कि इस बात को दिल में रक्खूंगी, लेकिन तुम से न छिपा सकी अब जो होय अब दिल की बात दिलही में रहैगी।

सुनिया। सखी! मुझे भी बताने में पसोपेश करती हो? यही तुम मुझको प्यार करती हो? जब तक मुझे सब न बता देओगी तब तक मैं कभी न मानूंगी। तुम दुश्मन को क्योंकर प्यार करती हो और यह इश्क क्योंकर हुआ? इस बात जानने को मेरा दिल बहुत खाहिशमंद है॥

रोशन०। बहन! अब वह बात क्यों पूछती हो? मेरे रंज पर कुमार बिजयसिंह ने कभी रँज किया था? तो मैं क्यों उनको प्यार करती हूं? मैं न जाने क्यों उन्हे प्यार करती हूं। अच्छा जिस दिन उन्हों ने मुझे कैद किया था उस दिन की बात तुम्हें नहीं याद है?

सुनिया। याद है। बहुत अच्छी तरह से आंखों के सामने है॥

रोशन०। तुम्हें याद है कि कितनी देर मुझे कैद में रहना पड़ा था? बहन तुम से क्या कहूं वहां पर ऐसा अँधेरा था कि मालूम होता था कि दम निकल गया फिर जब कुछ उजयाला देख पड़ा तब सब्र हुआ, लेकिन थोड़ी देर

में क्या नज़र आया कि गोया दो खून-आलूदः हाथ मेरे सामने आ खड़े हुये, देखते ही मैं चौंक पड़ी। धीरे धीरे वेही हाथ मेरे नजदीक आये और मेरी उन्होंने हथकड़ी खोलदी। ज्योंही उन हाथों ने मुझे छुआ कि मेरे बदन के रोंगटे खड़े हो गये और मैं दहशत से कांपने लगी। फिर किसी ने ज़ोर से कहा "यवनदुहिता उठो" मैं उसकी बात पर डरते २ उठी लेकिन उसकी तरफ़ देखने की हिम्मत न पड़ी। फिर वह मेरे सामने आया और मैंने उसे देखा। खुदा मालूम उसे मैं ने किस साअत में देखा था, वही देखना गज़ब हो गया, मैं ने जाना कि कोई शैतान की सी खौफ़नाक सूरत देख पड़ेगी मगर उसके बदले सूरत में यूसुफ़ सा निहायत हसीन एक जवान दिखाई पड़ा, मैंने ख्याल किया था कि उसे डाटूंगी लेकिन मेरे मुंह से एक बात भी न फूटी, मेरा ही दिल मेरा दुश्मन हो गया उस वक्त से मैं अज़खुद रफ़्त होकर उस के पीछे २ चलने लगी! तभी से मेरा दिल मेरे काबू में नहीं और हमेशा के लिये उसी का मुती हो गया। राजकुमारी सरोजिनी मुझको सखी के मुआफ़िक प्यार करती है, बहन के बराबर हिफ़ाज़त से रखती हैं यह सब सच है लेकिन वह यह नहीं जानतीं कि उन्होंने आस्तीन का एक सांप पाला है। बहन तुम से क्या कहूं राजकुमारी चाहे मुझे कितना ही क्यों न प्यार करें

परन्तु मैं उनका भला कभी न चाहूंगी खासकर वे कुमार विजयसिंह की मुहब्बत से सरशार होंगी यह तो जीते जी मुझ से कभी न देखा जायगा॥

सुनिया। सखी! विजयसिंह हिंदू हैं, तुम मुसलमान हो, तुम उनकी मुहब्बत की किस तरह ख़ाहिश करती हो? इससे तो तुम यहां न आई होतीं तो अच्छा था। विजयसिंह को सरोजिनी के साथ जब देखोगी तब तुम्हारे दिल पर क्या कुछ गुज़रेगा? बहन! यह रंज उठाने के लिये तुम क्यों चित्तौर से यहां आईं?

रोशन०। सखी! मैंने सोचा था कि मैं यहां न आऊंगी, लेकिन न जाने मेरे दिल के भीतर से कौन कहने लगा कि जा इसी वक्त जा, सरोजिनी के ऐश का दिन तुलू होने वाला है, तू जा और उसको रोक। तुझ ऐसी कमनसीब की मौजूदगी से उसका कुछ न कुछ बुरा होवेहीगा। बहन मैं इसी लिये आई हूं; मैं अपनी सरगुज़श्त सुनने के लिये इतनी बे सबर नहीं हूं। अगर सरोजिनी का मतलब पूरा हुआ, और उनका विजयसिंह के साथ ब्याह हुआ, तो सखी! यह तुम यकीनन् जानना कि मेरे दिन इस दुनियां में बहुत थोड़े रह गये हैं॥

सुनिया। यह क्या कहती हो बहन? तुम क्योंकर विजयसिंह और सरोजिनी के विवाह को रोकोगी? यह बात

गैर-मुमकिन है; इस से तो बिजयसिंह को एक बारगी भूल जानाही अच्छा हैं ॥

रोशन०। हाः! बहन, इस जिन्दगी में यह तो गैर मुमकिन है। (गाती है)

वोह नहीं मिलता कहां जांऊँ।
हाय मैं क्या करूं कहां जाऊँ॥
रहनुमाई करै जो आलमे ग़ैब।
वोह जहां है तहां तहाँ जांऊँ॥
हो न गुम गश्त में कहीं वह गुल।
जी में है आज बोस्तां जांऊँ॥
दूर वोह गुल मैं मरने के नजदीक।
हाय मै नातवां कहो कहां जांऊँ॥
घर में बैठा रहूं तवक्कुल पर।
सच है नासिख़ कहां कहां जांऊँ॥

मुनिया। बहन! कोई आता है।

रोशन०। यह क्या। राजा और सरोजिनी साथ २ इधर आते हैं। आओ बहन हम तुम इस के पीछे छिप रहैं। मेरा गाना तो कहीं नहीं सुन लिया?

[दोनों वृक्ष की ओट में छिप जाती हैं]

(लक्ष्मणसिंह और सरोजिनी का प्रवेश)

लक्ष्मण०। (स्वगत) जः! मैं बेटी के सुख की ओर क्यों कर देखूं?

सरोजिनी। पिता जी! मुसल्मानों के साथ कब लड़ाई होगी?

लक्ष्मण०। बले! मैं पिता नाम के योग्य नहीं हूं। मेरी अपेक्षा यदि अधिक भाग्यवान पिता होता तो तुम्हारे उपयुक्त होता।

सरोजिनी। पिताजी! यह क्या कहते हैं? आप से अधिक भाग्यवान कौन होगा? आपको किस बात का अभाव है? आपकी नाईं न्यायी और मर्य्यादायुक्त राजा और कौन है?

लक्ष्मण०! (स्वगत) आहा! यह सरला बाला कुछ भी नहीं जानती है। पिता जो इसका कृतान्त हैं, सो इसे अब तक भी नहीं ज्ञात है।

सरोजिनी। पिता जी! आप क्या सोचते हैं? बीच २ इस प्रकार दीर्घनिश्वास क्यों लेते हैं मैंने क्या कोई अपराध किया है? हमलोग क्या बिना आपके आदेश के यहां चली आई हैं? तब क्यों आप इस भांति मेरी ओर देखते हैं?

लक्ष्मण०। नहीं बले! तुमसे कोई अपराध नहीं हुआ। इस समय युद्धसज्जा में बहुत बातें सोचने की होती हैं, इसी से तुम मुझको कुछ अन्यमनस्क देखती हो।

सरोजिनी। यह तो इस भांति की भावना नहीं जान पड़ती। आपके देखने से जान पड़ता है कि आपके जी में कोई भयानक यातना उपस्थित है। पिता जी! बोलिये

क्या हुआ है? हमसे कुछ भी न छिपाइये, ऐसा भाव तो आपको कभी नहीं हुआ।

लक्ष्मण०। हा बत्से!

सरोजिनी। आप क्यों इस भांति दीर्घनिश्वास लेते हैं? बोलिये क्या हुआ है? और मुझे यंत्रणा न दीजिये। बोलिये, शीघ्रही बोलिये।

लक्ष्मण०। बत्से! और क्या कहूं। मुसल्मान—

सरोजिनी। मातः चतुर्भुजे! जिनसे पिता को आज ऐसा विषम सोच उपस्थित हुआ है ऐसे दुष्ट मुसल्मानों का शीघ्र ही निपात करो।

लक्ष्मण०। बत्से! मुसल्मानों का निपात सहज में न होगा, उसके पहिले बहुत अश्रुपात करना पड़ेगा। हृदय का रक्त पर्य्यन्त सुखाना होगा।

सरोजिनी। यदि देवी चतुर्भुजा हमलोगों पर प्रसन्न हैं, तो किसी बात का डर नहीं है।

लक्ष्मण०। बत्से! देवी चतुर्भुजा अब हम पर अत्यन्तही निर्दय है।

सरोजिनी। यह क्या पिताजी! तो क्या देवी को प्रसन्न करने ही की आज्ञा से भैरवाचार्य्य यज्ञ करेंगे।

लक्ष्मण०। हां बत्से।

सरोजिनी। यह यज्ञ क्या शीघ्रही होगा?

लक्ष्मण०। इस यज्ञ में जितनाही विलम्ब हो उतनाही अच्छा है, किन्तु सुनते हैं कि भैरवाचार्य्य क्षणमात्र भी न देरी करेंगे।

सरोजिनी। क्यों विलम्ब करने की क्या आवश्यकता है? जितनाही शीघ्र अमङ्गल की शान्ति होवै, उतनाही अच्छा है। इस यज्ञ के देखने की मेरी बड़ी इच्छा है। पिता जी! हम वहां रहने पावैंगी?

लक्ष्मण०। (दीर्घनिश्वास) हां!

सरोजिनी। पितः! क्या हम वहां न रहने पावैंगी?

लक्ष्मण०। (उत्कण्ठित होकर) पाओगी। अब मैं जाता हूं, हा!

(वेग से लक्ष्मणसिंह का प्रस्थान)

(रोशनयार और मुनिया का वृक्ष की ओट से फिर प्रवेश)

सरोजिनी। यह क्या? तुम लोग इतनी देर तक कहां थीं?

रोशन०। सखी! हमलोग यहीं घूमती थीं, जब महाराज को आते देखा तो इस पेड़ की आड़ में छिप गई थीं।

सरोजिनी। सखी रोशनयार! देखो पहिले पिताजी हमको देखकर कितना आदर करते थे, आज कुछ भी न किया; प्रसन्न होना तो दूर रहै, हमको देखकर उनका मुख बहुतही मलिन हो गया, हमसे अच्छी भांति बोले तक नहीं, सखी इसका क्या कारण है? हमारे मन में तो भय उत्पन्न होता

है, हमारे ऊपर इतने रुष्ट पिता जी कभी नहीं हुये थे, जान पड़ता है कि कोई विपद शीघ्रही खड़ी होवैगी। मातः चतुर्भुजे! हमको चाहे जो हो जावे, परन्तु हमारे पिता जी को कुछ न हो।

रोशन०। राजकुमारी! पिता आज तुमसे कुछ कम बोले हैं, तो इससे इतनी उदास क्यों होती हो? देखो तो मैं उम्र भर से बिना मां बाप की मुल्क २ फिरी हूं, मेरी बराबर तुम्हें तो कुछ भी रञ्ज नहीं है। बाप ने अगर तुम्हारी बे क़दरी की है, तुम्हारे मां है, मां की गोद में तुम्हें धीरज मिलैगा; और जब वे दोनों बे-तौक़ीरी करैं तो कुमार बिजयसिंह तो हैं!

सरोजिनी। सखी! वे कहां हैं? जब से मैं यहां आई हूं तब से उन्हें तो एकबार भी नहीं देखा। (स्वगत) मैंने जो सोचा था कि वे मेरे देखने के लिये कितने व्यग्र होंगे, उस का अन्त क्या यही है? क्या युद्ध के उत्साह में वे भी मुझे भूल गये?

(घबराई हुई राजमहिषी का प्रवेश)

राजमहिषी। आओ बच्चे! यहां से चलें इसी समय चलो चलें, अब यहां एक दण्ड भी रहना उचित नहीं है क्योंकि यहां मानरक्षा नहीं। पहिले मैं चकित हुई थी कि महाराज मुझसे अच्छी भांति बातें क्यों नहीं करते, परन्तु अब मैं सब

अच्छी भांति समझ गई। ऐसा अशुभ सम्बाद सुनकर कौन माता पिता का हृदय आकुलित न होगा? पहिले तो महाराज ने सूरदास को पत्र देकर हमको बुला भेजा था, परन्तु जब सुना कि कुमार बिजयसिंह का मन फिर गया है, तब उन्होंने रामदास के हाथ यह पत्र भेजकर हमको निषेध कर भेजा। हम सूरदास का पत्र पातेही चली आईं, इसी कारण रामदास से भेंट न हुई। यह पत्र अब हमें मिला है, आओ बत्से! चित्तौर लौट चलें यहां रहने से कुछ कार्य्य न निकलेगा, केवल अपमानही होगा। बिजयसिंह का मन अब फिर गया है, बत्से! अब वह तुमसे विवाह न करैंगे।

सरोजिनी। (स्वगत) यह क्या सुन रही हूं? क्या वे मुझ से अब नहीं बिवाह करना चाहते? जिनको हृदय, मन, सब समर्पण कर चुकी हूं, उनके ये व्यवहार? जो वे कहते थे कि हम तुम को इतना चाहते हैं सो क्या सब मिथ्या था? मातः चतुर्भुजे! अब तुम मुझ को ले लेव, क्योंकि अब इस पाप पृथ्वी पर रहने की क्षण भर भी मेरी इच्छा नहीं है।

रोशन०। (स्वगत) जो कहीं ऐसा होय जैसा ये कहती हैं, तो बहुतही अच्छा हो; मैं जो सोचती थी सो आपही से वाकअ हो गया। अब देखिये मेरे नसीब में क्या है?

राजमहिषी। (स्वगत) देखो तो इस के सुनने से बेटी की आंखें आंसुओं से भर गईं, और मुख एक बारगी पीला हो गया। (प्रकाश) बत्से। इस बात से तुम्हें दुःख न करना चाहिए किन्तु राग करना चाहिए। हा! मैं इतनी निर्बोध ठहरी कि उस शठ की बातों में आ गई! कहां तो मैंने आशा की थी, कि बिजयसिंह ने महत्-बंश में जन्म लिया है, उनके साथ तुम्हारा बिवाह होने से हमारे बंश की मर्य्यादारक्षा होगी सो देखो उसका यह फल हुआ। मैं यह स्वप्न में भी न जानती थी कि वह इस भांति नीच व्यवहार करैगा। बत्से। तुम जो हमारी बेटी हो तो इस अपमान को कभी न सहो। आवो चलें, जिसमें उसका मुख भी न देखना पड़े! मैंने जाने का सब सामान कर रक्खा है केवल एक बार महाराज की भेट किया चाहती हूं।

रोशन०। राजमहिषी! मेरा यहां दो एक दिन रहने का इरादा है क्योंकि यह जगह मैंने पहिले कभी नहीं देखी।

राजमहिषी। रहो, तुम यहां रह!—तुम्हारा हमारे साथ जाने का कुछ काम नहीं है; हम जब चली जांयगी तभी तुम्हारी मनोकामना पूर्ण होगी,—जाव, बिजयसिंह तुम्हारी राह देख रहे हैं, अब मत देरीकरो, तुम्हारे मन का भाव मैं अच्छी भांति जानतीं हूं। देखो सरोजिनी! मैं महाराज के यहां जाती हूं, तुम प्रस्तुत रहना।

(राजमहिषी का प्रस्थान)

सरोजिनी। (स्वगत) यह क्या? रोशनयारा से मां यह क्या कह गईं? क्या बिजयसिंह इन्हीं पर अनुरक्त तो नहीं हैं? (प्रकाश्य) क्यों बहन! मां तुम से यह क्या कह गईं?

रोशन०। राजकुमारि! मैं भी यह कुछ नहीं समझती।

सरोजिनी। (स्वगत) यह क्या, रोशनयारा भी कुछ नहीं समझी? तब फिर मां यह क्या कह गईं? बिजयसिंह का मन भी एक बारगी यह कैसा हो गया? मैंने तो ऐसा कुछ नहीं किया जिसमें वे मुझ से रूठ जांय। इसका कारण किस भांति जान पड़े? क्या उनसे एक बार भेंट करूं? नहीं भेंट करने का कुछ काम नहीं है, क्योंकि यदि सत्यही वे और किसी पर अनुरक्त होंगे, तो केवल अपमान ही होगा! चित्तौर ही लौट जाना अच्छा है। अच्छा, परन्तु रोशनयारा यहां क्यों रहने की बहुत इच्छा करती है? (प्रकाश्य) बहन! रोशनयार! तुम अकेले यहां क्योंकर रह सकोगी? तुम भी बहन हमारे साथ चलो, चित्तौर में तो मुझ से अलग एक क्षण भर भी नहीं रह सकतीं थीं, यहां क्योंकर रहोगी?

रोशन०। बहन! यहां मैं बहुत दिन न रहूंगी, मेरा एक काम है ज्योंहीं वह हो गया त्योंहीं मैं भी चली आऊंगी।

सरोजिनी। यहां तुम्हारा क्या काम है? मां जो कह गई हैं कि बिजयसिंह तुम्हारी अपेक्षा करते हैं सो क्या सत्य है?

रोशन०। बिजयसिंह ?—वे अपेक्षा करेंगे ऐसी खुशनसीबी!—(स्वगत) अरे! यह क्या कह दिया। (प्रकाश्य) वे वे वे बहिन मेरे लिये क्यों अपेक्षा करेंगे ?

सरोजिनी। (स्वगत) मां ने जो सन्देह किया था, सो सब सत्य है। (प्रकाश्य) रोशनयार। मैं यह ठीक जानती हूं कि तुम्हें कोई कैसाही लिवा जानेवाला क्यों न हो, परन्तु तुम न जाओगी। आश्चर्य। जो हम कभी स्वप्न में भी न सोचतीं थीं, सोई आज देख रही हैं—हम सब समझ गईं कि तुम कुमार बिजयसिंह की भेट किये बिना कभी न जावगी। रोशनयार। अब क्यों मुझ से झूठ मूठ छिपाती हो ? मां जो कह गई हैं वही ठीक है, और मेरे यहां से चले जानेही से तुम्हारी मनोकामना पूर्ण होगी।

रोशन०। क्या! जो मेरे मुल्क का दुश्मन है जो मुझे कैद कर लाया है, जो काफ़िर है, जिसके देखने से मरे मन में कराहियत पैदा होती है, उसी को मैं—

सरोजिनी। हां बहिन। तुम्हारा भाव देखने से अच्छी भांति जान पड़ता है कि तुम उसी को प्यार करती हो। जिस शत्रु की तुम बातें करती हो उस शत्रु की घृणा करना तो दूर रहे परन्तु यह मैं निश्चय जानती हूं कि तुम उसी को हृदयमन्दिर में पूजा करती हो। मैंने तो यह विचार किया था, कि जिसमें तुम देश को लौट जाव इसकी

चेश करूंगी—किन्तु यह नहीं जानती थी कि यही दासत्व तुम्हें अति प्रिय है। जो कुछ होय मैं तुम्हें दोष नहीं देती, यह सब मेरे भाग्य का दोष है। बहन! तुम सुख से रहो, तुम्हारी मनोकामना पूर्ण होय, - किन्तु बहन तुम ने यह पहिले क्यों न बतलाया कि तुम उन्हे प्यार करती हो?

रोशन०। राजकुमारि। अब तुम से क्या कहूं? भला कभी यह मुमकिन हो सकता है कि महाराज लक्ष्मणसिंह की हसीन और आकिल लड़की को छोड़ कर, वे एक ना-मालूम अदना दरजे की मुसलमानी से मुहब्बत करेंगे?

सरोजिनी। रोशनयार! अब क्यों मुझे यंत्रणा देती हो? तुम्हारी मनोकामना पूर्ण हो गई, इसी में संतुष्ट रहो, मेरा उपहास करने से तुम्हें क्या लाभ होगा! (स्वगत) पिता जी उस समय उदास थे, इसका कारण अब अच्छी भांति जान पड़ा।

(बिजयसिंह का प्रवेश)

बिजय०। यह क्या राजकुमारि! आप यहां कब आईं? आप यहां आईं हैं इस बात को यद्यपि हमने सारी सैन्य से सुना था, तथापि हमें बिश्वास न हुआ था। आप यहां क्यों आईं हैं? अभी महाराज ने तो मुझ से कहा था कि आप की अवाई नहीं है! सो यह कैसी बात है?

सरोजिनी। राजकुमार! भय मत करो, मेरे न रहनेही से

आपका मनोरथ पूर्ण होगा सो मैं जाती हूं। आप यहां सुख से रहिये।

(सरोजिनी का प्रस्थान)

विजय०। (स्वगत) राजकुमारी को आज यह क्या हो गया है? और मुझे ऐसी बात क्यों कह गईं? यहां से चली क्यों गईं? (प्रकाश्य रोशनयार से) भद्रे! बिजयसिंह के निकट आने से आप विरक्त तो न होंगी? यदि मेरे साथ बातें करने में कुछ आपत्ति न होय तो मैं आपसे कुछ पूछूं।

रोशन०। कैदी को किस बात का इन्कार है? आपही के हाथ में तो हमारा जीना मरना सब है। राजकुमार क्या सचही में आप हमारे दुश्मन है?

विजय०। तुम्हारा शत्रु तो नहीं हो सक्ता हूं परन्तु इसमें तो कुछ भी सन्देह नहीं है कि मैं तुम्हारे देश का शत्रु हूं।

रोशन०। आप मेरे मुल्क के दुश्मन तो बेशक हैं लेकिन मैं आपको दुश्मन नहीं समझती हूं।

विजय०। जो तुम्हारे देश का शत्रु है उसको शत्रु नहीं समझती हो? क्या तुम्हे अपना देश प्रिय नहीं है?

रोशन०। राजकुमार। क्या ऐसा कोई नही होता जिसको देश से भी ज्यादा—

बिजय०। यह क्या। तो क्या तुम्हारे पिता माता अभी वर्त्तमान है?

रोशन०। नहीं राजकुमार मेरे बाप मां कोई नहीं हैं, मैं हमेशा से यतीम हूं। (स्वगत) अगर अबकी मर्तबः पूछा कि वह कौन है जो देश से ज्यादा प्यारा है तो कह दूंगी। और अबकी दफः ये ज़रूर इस बात को पूछेंगे।

बिजय०। भद्रे! तुम यह जानती हो कि राजमहिषी और सरोजिनी यहां क्यों आई हैं?

रोशन०। (स्वगत) देखो तो मेरा नसीब! वह बात इन्होंने अबकी भी न पूछी (प्रकाश्य) राजकुमार! आप क्या आने का सबब नहीं जानते?

बिजयसिंह। हम तो नहीं जानते क्योंकि हम तो एक महीने पीछे अभी आये हैं॥

रोशन०। महाराज ने तो आप के साथ ब्याह करने के लिये बुलवाया था। आप भी तो सरोजिनी के लिये—

बिजय०। (स्वगत) मैंने भी तो ऐसाही सुना था, परंतु न जानें क्यों महाराज ने इस बात को अमूलक कह कर उड़ा दिया। उन्हों ने क्या मेरी प्रतारना की? परंतु प्रतारना से उद्देश्य क्या होगा? मुझे तो कुछ भी नहीं समझ पड़ता। (प्रकाश्य) अच्छा यह बता सकती हो कि राजकुमारी इस समय कहां चली गईं?

रोशन०। राजकुमार! मुझे तो जान पड़ता है कि वे चित्तौर गईं।

विजयसिंह। (स्वगत) इच्छा तो होती है कि चित्तौर जा कर राजकुमारी से भेट करूं। मुझे तो कुछ भी नहीं समझ पड़ता। महाराज ने मुख से तो एक बात कही, परंतु कार्य्य में संपूर्ण प्रकार से बिपरीत करते हैं। कुछ-२ सब हम से छिपाते से जान पड़ते हैं। (प्रकाश्य) भद्रे! यह तुम जानती हो कि राजकुमारी ऐसी कटु बातें कह कर क्यों चली गई?

रोशन०। राजकुमार। मुझे तो यह समझ पड़ता है कि राजकुमारी अब आप को उस तरह नहीं चाहती हैं।

विजय०। (स्वगत) एकबारगी यह क्योंकर हुआ? क्या मुझ से कुछ अपराध हो गया है? आज मुझे सब शत्रु से दीख पड़ते हैं। अभी देखो रणधीरसिंह और और प्रधान सेनापति मेरे विवाह के विरोधी हुए थे। जान पड़ता है कि सब मेरे विरुद्ध कुछ मंत्रणा करते, हैं जो होय अब मुझे इस विषय की जड़ अन्वेषण करना चाहिये।

(बिजयसिंह का प्रस्थान)

रोशन० (स्वगत) यह क्या? विजयसिंह का दिल तो कुछ भी नहीं फिरा है। सरोजिनी को जिस तरह से प्यार करते थे उसी तरह प्यार करते हैं। न जानें राजमहिषी ने वह बात क्यों कही थी? हा! मैंने जो उम्मेद की थी वह कुछ भी न हुई। जो कुछ हो, सरोजिनी! तेरा सुख मैं कभी

न देख सकूंगी, और जो सब बातें देख पड़तीं हैं, उन से जान पड़ता है कि—(चिन्ता करती है) (प्रकाश) देखो बहिन सुनिया। मुझे यह अच्छी तरह समझ पड़ता है कि हाल में ही कोई बड़ा घमासान होनेवाला है। मैं अन्धी नहीं हूं। मुझे जान पड़ता है कि सरोजिनी पर कोई आफ़त आनेवाली है; फिर महाराज लक्ष्मणसिंह दिन भर रंजीदा देख पड़ते हैं; बहन! ये सब बातें देखने से मुझे कुछ उम्मेद होती है और यह जान पड़ता है कि अल्लाह सरोजिनी से खुश नहीं है।

सुनिया। यह बहिन तुम क्योंकर जानती हो? बिजयसिंह के साथ बातें करने से तो जान पड़ता है कि वे सरोजिनी के लिये बहुत ही फ़िकरमंद हैं, तुम्हारी ओर तो वे अच्छी तरह देखते भी नहीं।

रोशन०। बहन सुनिया! चाहे वे अच्छी तरह देखें वा न देखें, बिजयसिंह चाहे मुझे प्यार करें वा न करें, परंतु मैं तो उन को कभी नहीं भूलूंगी।

(अन्य मन गीत)

ठुमरी।

अपनी विथा मैं कासे कहूंरे, तुमरे करवा जो दुख पावा।
का हम तुम से कीन बुराई, यहो न तुम से प्रीति लगाई,
कदर पिया कुछ तुमरी खता नहि, मोर किया मोरे आगे आवा।

मुनिया। यह बहिन! क्या ताअज्जुब की बात कहती हो? जब तुम्हें वे नहीं चाहते हैं तो क्या उनके लिये पागल होगी?

रोशन०। तुम मुतआज्जुब होती हो, जो लोग सुनेंगे वे भी मुझे पागल कहैंगे, लेकिन बहिन मैं तुम से सच कहती हूं, कि जिस समय उन्होंने मुझे कैद किया था उसी वक्त, मैंने न जानें उनको किन आंखों से देखा था कि उनकी तस्वीर मेरे दिल में खिंच गई। वे जो अब मुझ को ठोकर से भी मार देवें तो भी मैं उन के कदम तले पड़ीं रहूंगी-लेकिन जो कोई कहै कि और कोई उनके इश्क मे सरशार होवे, तो यह मुझ से न देखा जायगा; मुझे चाहै कहने का इख़तियार हो वा न हो, लेकिन मैं तो सरोजिनी को हरीफ समझूंगी। बहिन! मैं अपनी हरीफ का भला जान रहते न देख सकूंगी।

मुनिया। बहिन! तुम्हारी ये बातें तो मेरे समझ में नहीं आतीं-इन्हें रहने देव, कहीं कोई सुन न ले, चलो बहिन! अब यहां से चलें।

(दोनों का प्रस्थान)

॥ इति द्वितीय गर्भाङ्क ॥

॥ द्वितीय अंक समाप्त ॥

द्वितीय अङ्क।

प्रथम गर्भाङ्क।

चित्तौर का राजपथ।

(फतेउल्ला का प्रवेश।)

फते०। (राह में चलते हुये स्वगत) ई सहर ते एक कोस आगे चलिकै चाचा जी का अस्थान नजर आई। अब मोरे बोस क्षास चले कै ताकत ह्वैगै है। चाचा जी तौ भातु खवाय २ मुहिका रफा दफा करि डारो रहैन मुलु बीच मां दिल्ली जाय का परा हुंवां खाय पी कै बचि गयेंव। वाह। पियाज मां केत्ता गुनु है कि मोर छाती जानो हाथन फूलिगै अब मैं कौनेव हिन्दू का नहीं गिनत्यौं आंय, हम बादशाह की जाति के आहिन हमैं कौन परवाह। हम नहीं बादशाह होय् जातेन? अरे सब नसीब के काम है। जौ हम बादशाह होन तौ सब हिन्दुन का बोटी २ करवाय डारन; और गद्दी पर बैठि कर अ की तरह हुकुम करन, बैंगनो कबाब और भौंगा मछली खूब बनवाय बनवाय के खांन (हँसता हुआ) और जौ ऐस होय तो चाचा जी का वजीर बनाउब। अबै कबहूं कबहूं चाचा जी मोहका मारैं आवत हैं, मुलु फिर न मारैं फिर हाथ जोड़े मोरे सामने हर घड़ी ठाढ़ रहा करैं। हि हि-हि-हि-(अपना सब अङ्ग देखता है) मोर चेहरा बादशाह लायक ह्वैगा है अब जानौ मोरी सब देह ते

चिकनाई चुअति है चोटिअौ कटाय डारी और नूर निकरत आवत है अब मैं चाचा जी का बात न सुनिहौं चाहौ काटैं चाहै मारैं मुलु मैं न सुनिहौं। उन्हहिन तो मोह का हिंदू बनावन चही रहैन। उन्हहिन तो झांसा देकै हियां हमें डारि दीन्हिनि अब उनका याक दांय सलाम करि कै मैं तो दिल्ली चल जइहौं उनका जो होय का होई सो होई। वाह दिल्ली कैस मजेदार सहर है हुंआ ते अन्तरवेदी लौटि कै जांय का जिव नहीं चहत।

(तीन राजपूत रक्षकों का प्रवेश)

प्र० रक्षक। यह कौन जाता है? कोई बिदेशी जान पड़ता है।

द्वि० रक्षक। हम लोगों को अब अच्छी भांति सावधान रहना उचित है। यह मुसलमानों का गुप्त चर न होय।

फते० (स्वगत) अब तो मैं कौनेउ हिंदू का नहीं गिनतेंव आंय-दाखन अब कौन आय कै हमैं रोकत है। जो अई तो एक रहपट मां गिराय दांहौं। हम बादशाह की जाति के आहिन हम पंच हिन्दुन का डेरान? अब तो मैं कोहू का नहीं देखतेंव जो सामना करि सकै (अकड़कर चलता है)।

द्व० रक्षक। मुझे तो मुसलमान ही जान पड़ता हैं देखो तो अकड़ता हुआ चलता है। देखो मैं पूंछता हूं। (निकट जा कर) क्यों रे तू कौन है?

फते०। (स्वगत) अरे ई को आंय? तीन हथियार बांधे सिपाही अरे बाप रे अब मारे गएंव अल्लाह-(कम्पमान।)

प्र० रक्षक। अबे बताता क्यों नहीं? बोल नहीं मजा चक्खेगा।

फते०। हम कोऊ न आहिन बाबा।

द्वि०रक्षक। कोऊ न आहिन? लगाओ तो इसके।

फते०। बताता हूं-बताता हूं-मारो न मारो न-मुसाफिर आंहिऊं।

तृ०रक्षक। यह इतना छिपाने की इच्छा करता है तो भी मुसलमानी बात मुंह से निकल पड़ी, यह अवश्य कोई मुसलमान चर है।

फते०। अल्ला रे, मैं मुसलमान ना आंहिऊं हिंदू आंहिउ, मैं हिंदू आंहिउं मैं तुम्हारा ही जात बिरादरी हूं।

प्र०रक्षक। बदमाश! कहता है अल्ला रे, और फिर कहता है मुसलमान नहीं हूं। (ऊंचे स्वर से हंसता है) क्यों रे अब भी छिपाने चाहता है? अच्छा बताव तो तू कौन जात है?

फते०। मैं बिरामन ठाकुर हूं, मैं-मैं-म म-म महजिद मर मन्दिर में घंटा बजावत हौं।

प्र०रक्षक। महजिद में! अच्छा बाप के भाई को हम लोगों के यहां क्या कहते हैं?

फते०। (शिर झुकाये हुये) चाचा।

प्र०रक्षक। हां यह तो ठीक बताया (सब हँसते हैं) अच्छा बताओ बाप की बहिन के स्वामी को क्या कहते है?

फते०। फूफा।

प्र०रक्षक। यह भी ठीक बताया (सब हंसते हैं) अच्छा कहो "हम हराम खाते हैं"?

फते०। ऐं, यह काहे? यह काहे?

प्र०रक्षक। कह नहीं तो अभी——

फते०। कहत हौं, कहत हौं, मैं हराम -

प्र०रक्षक। फिर टाल मटोल करता है, कह नहीं तो अभी मार कर चूर कर डालूंगा।

फते०। कहत हौं, हराम खा-खात-खात-हौं-तोबा।

प्र०रक्षक। हाः। साला मुसलमान है, तू क्या हिंदू है। चलो यारो इस बदमाश को नगर पाल के यहां पकड़ ले चलें।

(फते को पकड़ कर मारते २ लिये जाते है)

फते०। मैं हिंदू हूं, मैं हिंदू हूं, आः, आः, मारो न बाबा-अरे, मरा ओ चाचा जी, मरा चाचा जी।

द्वि०रक्षक। चल साले, देखेंगे तेरा चाचा अब कैसे तुझे बचाता है।

(सभों का प्रस्थान)

इति प्रथम गर्भाङ्क।

तृतीय अङ्क।

द्वितीय गर्भाङ्क।

लक्ष्मणसिंह के डेरे।

(राना लक्ष्मणसिंह और राजमहिषी का प्रवेश)

राजमहिषी। महाराज! हम बिजय सिंह से कुपित होकर चलीं जातीं थीं थोड़ी ही दूर गई होंगी कि राह में बिजयसिंह मिले, और उन्हों ने तुम्हारे लौटने के लिये बहुत प्रकार से अनुरोध किया। उन्हों ने शपथ की कि वे बिवाह के निमित्त प्रस्तुत हैं, और उनका मन कुछ भी नहीं बदला है। किसने यह मिथ्या बात फैलाई है इसके लिये वे आप को ढूंढ़ते थे, और यह कहते थे कि जिस ने यह बात फैलाई होगी उसको उचित दण्ड दिया जायगा।

लक्ष्मणसिंह। देवि! अब हमारा सब भ्रम दूर हुवा, और मन का संदेह हट गया। अब तो बिवाह की सामग्री करनी चाहिये। भैरवाचार्य्य से पुरोहित का कार्य्य निकल जायगा, देखो तुम सरोजिनी को शीघ्र ही मन्दिर में भेजो, हम उसको वहां प्रतीक्षा करेंगे; और एक बात और है कि देखो तो यह कैसा स्थान है, जहां देखो वहां युद्ध की सामग्री हो रही है, इस से बिवाहस्थल में केवल बीर लोगों ही का जमाव होगा; सैन्य का कोलाहल, घोड़ों का हिन-हिनाना, हाथियों का चिघाड़ना और हथियारों की झन-

कार के सिवाय और कुछ न सुनाई प ेगा और चारो ओर बल्लम के जंगल के सिवाय और कुछ न दृष्टि आवैगा। देखो महिषी। वहां पर स्त्री नेत्ररंजन करने को कोई वस्तु न रहैगी; तुम्हारा वहां रहना अच्छा न होगा, और कुछ आवश्यक भी तो नहीं है। वह एक सामान्य मन्दिर है, कोई उपयुक्त स्थान नहीं है, और जो तुम सामान्य भाव से वहां जावगी तो सैन्य के लोग न जानैं क्या कहैंगे? इस से तुम्हारी दासी सरोजिनी को मन्दिर में ले जायगी और तुम यहीं रहना, तुम्हारे जाने का काम नहीं है।

राजमहिषी। यह क्या कहते हैं महाराज। हमारा जाने का काम नहीं है? मैं और के हाथ में सरोजिनी को सौंप कर निश्चिन्त रहूंगी? मैं बिवाह के लिए अपनी लड़की को यहां लाई और फिर बिवाह न देखने पाऊंगी?

लक्ष्मणसिंह। महिषी। यह तो स्मरण करो कि अब तुम चित्तौर के राजप्रसाद में नहीं हो अब सेना के डेरों में हो।

राजमहिषी। हां हां महाराज यह मैं जानती हूं कि मैं सेना के डेरों मे हूं परतु यह मैं नहीं चाहती हूं कि आप मेरे लिये कोई यहां के नियम का उल्लंघन कोजिये। यहां पर जो एक सामान्य सैनिक का अधिकार है उस से कुछ भी अधिक के लिये मैं आप से नहीं प्रार्थना करती परन्तु जब प्रधान प्रधान सनापति से ले कर एक सामान्य प्यादा

भी बिवाहस्थल में रहने पावैगा और उत्साह में मत्त होगा तब क्या जिसकी लड़की का बिवाह होगा वह न रहने पावैगी ? और जो आप कहते हैं कि वह एक सामान्य मन्दिर है वहां पर बैठने का उपयुक्त स्थान न होगा तो मैं आप से यह पूछती हूं कि जहां सूर्यवंशावतंस मेवाड़ के अधीश्वर रहैंगे वहां क्या उनकी महिषी नहीं रह सकती हैं।

लक्ष्मणसिंह। देबि मैं तुम से बिनती करता हूं कि तुम मेरे इस अनुरोध को मानो। मैं जो तुम को अनुरोध करता हूं तो अवश्य इसका कुछ कारण होगा॥

राजमहिषी। नाथ! जो मेरी चिरकाल से वांछा है उससे निराश न कीजिये। मेरे वहां रहने से आप को किसी भांति लज्जित न होना पड़ेगा। मैं अपनी कन्या का बिवाह न देखने पाऊंगी ऐसी निष्ठुर आज्ञा न करिये।

लक्ष्मणसिंह। हम जानते थे कि तुम हमारे कहने से मान जावगी, परंतु जब कहने से नहीं मानती हो, जब हमारा अनुरोध व्यर्थ हुवा, तब हमें यह आदेश करना पड़ा कि तुम वहां कभी नहीं उपस्थित होने पावोगी। महिषी! तुम को हम फिर कहते हैं, कि यह हमारी इच्छा है, यह हमारा आदेश है और इसी आदेशानुसार तुम्हें चलना होगा।

(लक्ष्मणसिंह का प्रस्थान)

राजमहिषी। (स्वगत) महाराज क्यों ऐसे निष्ठुर होकर हमें वहां जाने से रोकते हैं ? क्या वहां जाने से सच-

मुच ही हमारा मानलाघव होगा। जो कुछ होय जब वे आदेश करते है तब हमें अवश्य ही पालन करना पड़ैगा। हमें केवल इतना ही आक्षेप है की जो मन कि वांछा थी वह न पूर्ण हुई। परतु न हुई तो न सही हमारी सरोजिनी तो सुखी होगी और इसी से सब कुछ है। यह तो बिजय-सिह आते हैं।

(बिजयसिंह का प्रवेश)

विजय०। देवि। महाराज से भेट करने से जान पड़ा कि वे जनरव सुनकर प्रवंचित हो गये थे, अब उनके मन से सब संसय दूर हो गया। बहुत बातें न करके मुझे गाढ़ आलिङ्गन किया और विवाह की सामग्री करने के लिये आज्ञा की। राजमहिषि! आपने और भी एक सुसवाद सुना है? देवी चतुर्भुजा को प्रसन्न करने के लिये एक महायज्ञ का सामान हो रहा है उस मे एक लक्ष बकरों का बलि-दान दिया जावैगा। यज्ञानुष्ठान हो के पीछे हमारा विवाह होगा, और फिर हम सब युद्ध के लिये यात्रा करैंगे।

राजमहिषि। यही आशीर्वाद देती हूं कि युद्ध मे जयी ओ। तुम को म अपना ही जानतो हूं अपर नहीं समझती, मैं तुम को लड़कपन से जानती हूं, तब तुम सर्बदा हमारे यहां आया करते थे, महाराज तुम को मेरे महल में भेज देते थे, तुम को मैं मिठाई देती थी, खेलौने देती थी, तुम

सरोजिनी के साथ खेला करते थे यह बातें तुम्हें स्मरण होतीं हैं? तभी मैं सोचती थी कि यदि इन दोनों लड़कों का बिवाह होवै तो बहुत ही उत्तम होय, आज बिधाता ने मेरा मनोरथ पूर्ण किया है। बेटा! तुम यहां थोड़ी देर ठहरो, मैं सरोजिनी को बुला लाऊं।

बिजय०। जो आज्ञा।

राजमहिषी। (स्वगत) दोनों जनों को एकत्र देखने की मेरी बड़ी इच्छा होती है। बिवाह समय तो मैं रहने ही न पाऊंगी, इसी समय अपनी इच्छा पूर्ण कर लेऊं॥

(राजमहिषी का प्रस्थान)

(सरोजिनी और रोशनयार का प्रवेश)

बिजयसिंह। (स्वगत) यह देखो राजकुमारी तो आप ही आप आ रहीं हैं। (प्रगट) राजकुमारी! अब तो सब संदेह दूर हुआ। न जानै कैसे ऐसा जनरव उत्पन्न होगया। बड़े आश्चर्य्य की बात है कि महाराज राजमहिषी सभों ने ऐसे जनरव में विश्वास कर लिया॥

सरोजिनी। (स्वगत) हां! रोशनयार के निमित्त मुझे बड़ा दुःख होता है; उसका भाव देखने से जान पड़ता है, कि अब दासत्व उसे असह्य हो गया है॥

बिजय०। राजकुमारि! चुप क्यों हो? क्या अब भी संदेह नहीं मिटा?

सरोजिनी। नहीं राजकुमारि। मुझे अब कोई संदेह नहीं है, अब मेरी एक प्रार्थना है॥

विजय०। प्रार्थना? क्या प्रार्थना है कहिये। क्या विजय सिंह के यहां ऐसी भी कोई वस्तु है जो राजकुमारी सरोजिनी को अदेय होय?

सरोजिनी। राजकुमारि! मेरी प्रार्थना अति सामान्य है इन युवती यवनकन्या को आप ही बन्दी कर लाये थे—बहुत दिनों से उन्होंने आत्मीय लोगों का मुख देखने को नहीं पाया उनका भाव देखने से यह विदित होता है कि वह बड़े दुःख में रहतीं हैं। अभी थोड़ी देर हुई कि मैंने मिथ्या संदेह करके उनका तिरस्कार किया था—उससे भी वे मन में बहुत कष्टित हुई हैं। राजकुमार। ये आप ही की बन्दी है, आप की अनुमति से ये अभी दासत्व-शृंखल से मुक्त हो सकतीं हैं॥

रोशन०। (स्वगत) इसके तोड़ने से क्या होगा? जिस जंजीर से मेरा दिल बँधा है सरोजिनी! तेरी ताक़त नहीं कि तू उसे तोड़ सके॥

विजय०। भद्रे! क्या तुम्हें यहां कष्ट मिलता है?

रोशन०। राजकुमार। मुझे जिस्मानी तकलीफ तो कोई नहीं है - मेरा रंज दिली है; आपने मुझे कैद किया है, आप ही मेरे सब तकलीफ के बायस हैं। (गद्गदस्वर में) ऐसा

करिये कि राजकुमारी के साथ आप के बिवाह हो जाने पर हमें आप को न देखना पड़े; अब तकलीफ नहींसही जाती।

बिजय०। भद्रे! चिन्ता न करिये, शत्रु का सुख अधिक दिन तुम्हें न देखना पड़ैगा तुम्हारे दुःख के दिन हो गये-तुम हमारे साथ चलो जिस समय हमारा बिवाह होगा उसी शुभ क्षण में मैं तुम्हें दासत्व से मोचन कर दूंगा। (सरोजिनी से) राजकुमारी। यह तो अति सामान्य बात है इसके लिये इतना सोच करतीं थीं?

रोशन०। (स्वगत) हा! मेरा रंज किसी ने न जाना और जानैगा भी कौन? जिस के साथ हमारी दुश्मनी है उसके लिये मेरा दिल ऐसा क्यों हो गया यह मैं नहीं जानती तो और कौन जानैगा? सरोजिनी! मेरे यहां से चले जाने ही से तू बचैगी नहीं तो तू मुझे गुलामी से छुड़ाने के लिये क्यों इतनी कोशिश करती? फिर अगर बिजयसिंह यह जान कर रंजीदा होते कि गुलामी की तकलीफें बरदाश्त करती है और मुझे आज़ाद कर देते तो मैं खुशी होती लेकिन ये तो सरोजिनी का दिल रखने के लिये मुझे आज़ाद करेंगे। हा! अब मुझे कोई उम्मेद नहीं है।

(राजमहिषी का प्रवेश)

राजमहिषी। (सरोजिनी से) बत्से! तुम यहां हो? मैं तुम्हें बड़ी देर से ढूंढ़ती फिरती थी।

(घबड़ाये हुए रामदास का प्रवेश)

राम०। महारानी। महाराज यज्ञवेदी के सन्मुख राजकुमारी की राह देख रहे हैं उनको शीघ्र लिवाय लाने के निमित्त मुझे भेजा है (अधोमुख होकर) किन्तु किन्तु आप—

राजमहिषी। किन्तु क्या रामदास? अभी तुम लिवाय जाव।

राम०। नहीं-नहीं राजमहिषी मैं यह कहता हूं कि यदि आप राजकुमारी को वहां न भेजिये तो अच्छा होय॥

राज०। यह क्या रामदास? महाराज ने उसे बुला भेजा है, थोड़ी देर में बिवाह होगा सो मैं उसे न भेजूं यह कैसी बात कहते हो?

राम० राजमहिषी। आप सरोजिनी को वहां कभी न भेजियेगा। (विजयसिंह से) आप भी ऐसा यत्न कीजिये जिस में सरोजिनी वहां न जाने पावें। आप सिवाय कोई नहीं है जो उनकी रक्षा करै॥

विजय०। क्या। रक्षा! रक्षा कैसी? किस के अत्याचार से रक्षा करनी पड़ैगी?

राजम०। यह क्या कहते हो रामदास? तेरी बात सुनने से तो देह कांपती है। रामदास बतलावो। ठीक ठीक बतलाओ॥

राम०। राजकुमार। जिस के अत्याचार से रक्षा करनी पड़ैगी उसका नाम भी लेते मेरा हृदय बिदीर्ण होता है। मैं जितनी देर छिपा सका उतनी देर यह बात छिपाई।

परन्तु अब जब खांड़ा, रज्जू, अग्निकुंड सब प्रस्तुत हैं, तब मैं नहीं छिपा सकता हूं॥

बिजय०। जो कुछ होय शीघ्र ही उसका नाम बतलाओ; रामदास! इस में डर की बात नहीं है। आज एक लक्ष बकरों की बलि दी जायगी इसी से रज्जू इत्यादिक प्रस्तुत की गईं हैं, इस में तुम्हारे डरने का कारण कुछ नहीं है।

राम०। क्या आप कहते हैं? एक लक्ष बकरों का बलि-दान होगा? जो कुछ होय; राजकुमार। आप राजकुमारी के भावी पति है, और राजमहिषी आप उनकी माता हैं, मैं आप दोनों जनों से यह बात कहता हूं कि सावधान रहियेगा। राजकुमारी को महाराज के यहां न जाने दीजियेगा।

राजमहिषी। यह क्या बात है रामदास? महाराज से क्या भय है?

बिजय०। रामदास! सब बात अच्छी प्रकार से बतलावो, कुछ भय न करो।

राम०। और क्या बतलाऊं? आज तो लक्ष बकरों की बलि न दी जायगी, आज महाराज सरोजिनी को ही—।

बिजय०। क्या! महाराज सरोजिनी को ही?

सरोजिनी। क्या! हमारे पिता?

राजम०। कौन कहता है? महाराज अपनी कन्या को--

हमारी—सरोजिनी को हमारे हृदयरत्न को हमारे -(मूर्छित हो कर पतन)

सरोजिनी। यह क्या हुवा। यह क्या हुवा। मेरी माता को क्या हो गया ? मां ! यह क्या हुवा मां। उठो मां ! रामदास की सब बात झूठ है, पिता मुझे क्यों मारेंगे ? मैं ने तो कोई दोष नहीं किया है। उठो मां ! हम तुम से कहती है कि रामदास की बात सत्य नहीं है। (बिजयसिंह से) राजकुमार ! अब क्या होगा ? अभी पिता को सम्बाद दीजिये। मुझे बड़ा डर लगता है। (व्यजन)

बिजय०। राजकुमारि। भय नहीं है, अभी चेत आता है। रोशनयार। तुम भी एक ओर से पंखा झलो। (स्वगत) यह क्या बिभ्राट् है।

रोशन०। (व्यजन करते २ स्वगत) आः। मेरी क्याही खुशनसीबी है। बिजयसिंह ने आज मुझे नाम ले कर पुकारा; अच्छा हुआ जो यह आफ़त हुई। इश्क। तूने मेरे दिल को क्याही सख कर दिया है जब सब कोई रो रहे हैं तब मैं दिल में हंसती हूं। न जानें क्यों मैं सरोजिनी की तकलीफ़ से इतनी खुश होती हूं।

बिजय०। रामदास। यह क्या झूठ मूठ की बात कह कर एक बिपद खड़ी कर दी ? यह कभी सम्भव हो सकता है ? क्या यह बात बिश्वासयोग्य है ?

राम०। राजकुमार। मैं जानता था कि इस भयानक सम्बाद के प्रकाश करने से एक बिपद खड़ी हो जायगी, परन्तु मैं क्या करता? मैंने देखा कि इस बात के बताये बिना राजकुमारी की रक्षा का उपाय कोई नहीं है इसी से मैंने कह दिया। राजकुमार। मैं झूठ नहीं कहता हूं, मैं भगवान को लाखों धन्यवाद देता जो इस में कुछ भी संदेह होता। भैरवाचार्य्य कहते हैं कि चतुर्भुजा देवी और कोई बलि न ग्रहण करेंगी॥

बिजय। (स्वगत) यह क्या ही आश्चर्य्य की बात है! जो और किसी से कहो तो बिश्वास न करे। (प्रगट) यह देखो राजमहिषी को चेत हुवा।

सरोजिनी। (स्वगत) आ.। अब मैं बची॥

राजम०। (चेत में आकर) मेरी सरोजिनी कहां है? उसको ले तो नहीं गये?

सरोजिनी। मां! मैं यह क्या बैठी हूं!

राजम०। रामदास! ठीक २ बतलाओ। तुम जो कहते हो सो क्या सत्य है? महाराज ने क्या सत्य ही ऐसा आदेश दिया है?

राम०। राजमहिषी! मैंने एक बात भी मिथ्या नहीं कही है। किन्तु इस से अधीर न होकर आप को ऐसा उपाय करना चाहिय जिस में राजकुमारी की रक्षा हो, अब समय नहीं है॥

राजम०। (स्वगत) रामदास झूठ बोलने वाला आदमी नहीं है, अब सरोजिनी के बचाने का क्या उपाय सोचूं? अकेले बिजयसिंह क्या रक्षा कर लेंगे?

विजय०। (स्वगत) क्रोध से मेरा सर्व्वङ्ग कांपता है। मेरी ऐसी प्रतारना? पिता हो कर कन्या के साथ ऐसा व्यवहार? कहां तो शुभ विवाह और कहां यह दारुणहत्या? वह राजा होवै और चाहै जो होवै परन्तु उसको इसका समुचित प्रतिशोध दिये बिना कभी न शान्त हूंगा॥

सरोजिनी। (स्वगत) पिता मुझ को इतना प्यार करते है सो वे क्या ऐसा करेंगे?

राजमहिषी। रामदास। महाराज ही ने क्या यह आदेश दिया है?

रामदास। राजमहिषी। उनके आदेश विना को कार्य्य हो सकता है?

राजमहिषी। उनको सैन्य और सेनापतियों ने भी सम्मति देदी है?

रामदास। राजमहिषी। दुःख की बात क्या कहूं? वे तो सब उसके लिये उन्मत्त हो रहे हैं॥

राज०। (स्वगत) महाराज जो मुझे मन्दिर में रहने से निषेध करते थे उसका कारण अब अच्छी भांति समझ पड़ा। ऊः। वे इतने पाखंड होंगे यह मैं स्वप्न में भी न जा-

नती थी। अब क्योंकर बेटी को बचाऊं? जो उसका प्रकृत रक्षक है, जो उसका पिता है, वही जब उसका हन्तारक है, तब और कौन रक्षा करै? अब उसके कोई भी नहीं है। अब वह किसके मुख की ओर देखैगी? मैं खो जाति हूं, मेरे साध्य कुछ भी नहीं है। (प्रकट) रामदास। सैन्य में कोई भी ऐसा नहीं है जो इस बिपद से रक्षा करै?

राम०। राजमहिषी! ऐसा कोई नहीं है।

राज०य। (दो रक्षकों को आते कर) ये देखो महाराज ने फिर आदमी भेजा है। जान पड़ता है इस बेर बेटी को बल पूर्वक लिवाय ले जायेंगे। (सरोजिनी से) बेटी सरोजिनी! इधर आ। (सरोजिनी को ले कर बिजयसिंह के निकट सत्वर गमन) यहां पर खड़ी हो, ऐसा निरापद स्थान और कहीं नहीं है। (बिजयसिंह से) बत्स बिजयसिंह! इस असहाया अनाथा बाला को तुम्हारे हाथ में समर्पण करती हूं, इस के कोई नहीं है। पिता रहते भी यह पितृहीन है, सहाय रहते भी असहाय है। अब बेटा इसके तुम्ही एक मात्र भरोसा हो; तुम्ही इसके सुहृत सहाय, सर्ब्बस्व हो। तुम जो न रक्षा करोगे तो और उपाय नहीं है। यह देखो आये। बत्स! अब तुम्ही रक्षा करो।

बिजय०। (तलवार निकाल कर) राजमहिषी! कुछ भय नहीं है। मेरे जीते जी सरोजिनी को यहां से बल पू-

र्व्वक ले जाने की किसी की सामर्थ्य नहीं है, आप नि-
श्चिन्त रहिये॥ (दो रक्षकों का प्रवेश।)

रक्षक। महारानी की जय होय! सरोजिनी के मन्दिर भेजने में इतनी देरी क्यों हुई है, इस के लिये महाराज ने हम लोगों को भेजा है॥

राजम०। (स्वगत) क्या थोड़ी सी बिलम्ब से उन्हें अधीरता होती है? क्याही भयानक बात है! क्या वे अब और मनुष्य हो गय? उनके हृदय से वह कोमल दयार्द्र भाव क्या एक बारगी चला गया? क्या उन्हों ने एकबारगी किसी रक्तापिपासू पिशाच की मूर्त्ति धारण कर ली है? अच्छा अब मैं उनके यहां जाती हूं। देखूं तो उनका भाव कैसा होगया है, देखें कैसे अपना मुख मुझे दिखाते हैं (प्रगट बिजयसिंह से) वत्स। मैं अपना हृदयरत्न तुम्हारे निकट रख कर एक बार महाराज से भेट करने जाती हूं। (दोनों रक्षकों से चलो हम तुम्हारे साथ चलती है। मन्दिर भेजने में इतनी देर क्यों लगी, यह हम भी चल कर बतावेंगी॥

(रक्षकों के साथ राजमहिषी का प्रस्थान।)

बिजय०। राजकुमारि। हमारे जीते जी किसकी सामर्थ्य है जो तुम को यहां से ले जाय? जब तक हमारे देह में एक बिंदु भी रक्त रहैगा, तब तक तुम्हें कोई भय नहीं

है। राजकुमारि। इस समय केवल तुम्हारी रक्षा ही न करूंगा, परन्तु उस नराधम को, जिसने हमारी ऐसी प्रतारणा की है इस का समुचित प्रतिफल दिये बिना मैं कभी न निरस्त्र होऊंगा। देखो तो वह क्या ही पाषण्ड है! विवाह का नाम लेकर अपनी औरसजात कन्या को बलिदान देगा! इस से भी अधिक भयानक दुष्कर्म्म कोई हो सकता है? और फिर इस पर मेरी प्रतारणा! राजकुमारि! मुझ से और अब नहीं सहा जाता इसी तलवार को लिये हुये मैं अभी जाता हूं और देखता हूं कि—(गमनोद्यत)।

सरोजिनी। (भीत हो कर) राजकुमार! थोड़ी देर ठहरिये, मेरी बात सुनिये, जाइयेगा नहीं, जाइयेगा नहीं, थोड़ी देर ठहरिये॥

बिजय०। क्यों राजकुमारि! वे हमारी इस भांति अवमानना करते हैं और मैं उन को कुछ न कहूं? मैंने उनकी ओर हो कितने युद्ध किये उनकी कितनी सहायता की, कितना उपकार किया, सो उन सब उपकारों का यही प्रतिशोध है, सब परिश्रम का पुरष्कार अंत में यही है? हम ने पुरष्कार में तुम्हारे भिन्न और कोई वस्तु लेने की प्रत्याशा कभी नहीं की। सो यह बात तो दूर रही, वे स्वभाव के बन्धन, बन्धुता के बन्धन, सभों को तोड़ कर, रक्तपिपासू व्याघ्र की नाईं, पिशाच की नाईं ऐसे गर्हित कार्य्य में प्रवृत्त

होतेहै। और तुम्हीं बिचार कर देखो तो कि मैंही जो एक दिन पीछे आता तो क्या होता? तो तो तुम से इस जन्म में भेट न होती।

सरोजिनी। (रो कर) हां राजकुमार! तो तो आप को इस जन्म में देखना दुर्लभ था।

बिजय०। बिवाहस्थल में हम मिलेंगे इस भरोसे पर तुम चारों ओर दृष्टिपात करतीं परंतु हम कहीं भी न देख पड़ते। तुम बिखन्न चित्त से हमारी राह देखतीं, और उसी समय तुम्हारे मस्तक पर जब वह भीषण खड्ग उद्यत होता, तब तुम यही निश्चित करतीं कि निष्ठुर बिजयसिंह हमको प्रतारणा करता है, और वही मेरा हन्तारक है। इस समय मैं सब राजपूतों के सन्मुख उस नराधम से यह बात पूछना चाहता हूं, कि उस ने मेरी इस रूप प्रतारणा क्यों की? वह रक्त पिपासू पिशाच जानैगा, कि हमें प्रतारणा करने से क्या फल मिलता है॥

सरोजिनी। नहीं राजकुमार! उनको ऐसी बात न कहो, वे रक्तपिपासू पिशाच कभी नहीं हैं वे मेरे स्नेह मय पिता हैं।

बिजय०। क्या राजकुमारि! तुम अब भी उस के स्नेह की बात कहती हो? अब भी उसको पिता कहने की इच्छा रखती हो कभी नहीं अब वह तुम्हारे स्नेह मय पिता नहीं है, अब वे कराल कृतान्त है।

सरोजिनी। नहीं राजकुमार! वे अब भी हमारे पिता हैं, उनको मैं प्यार करती हूं, उनकी मैं देवता की ऐसी श्रद्धा करती हूं. वे भी मुझ को प्यार करते हैं मेरे ऊपर उनका स्नेह अब भी वैसाही है जैसा तब था। राजकुमार। उनको कुछ न कहिये उनको जो आप ऐसा कह रहे हैं इससे मेरे हृदय में सैकड़ों बरछी चुभने की यातना होती है।

बिजय०। और मेरा इतना अपमान हुआ इससे तुम्हारे हृदय में एक भी बरछी न चुभी? यही अपने अनुराग का परिचय देना है॥

सरोजिनी। (रोते हुए) राजकुमार! मुझ को ऐसी निष्ठुर बात कहते हो? और अनुराग का परिचय क्या अब भी नहीं पाया? क्या अब भी परिचय देना पड़ेगा? मेरे सम्मुख पिताजी को कितने दुर्वाक्य कहे कितना तिरस्कार किया, कितनी भर्त्सना करी और होता तो मैं यह सहती? किन्तु यह जान कर कि ये बातें कुमार बिजयसिंह के मुख से निकल रहीं हैं इससे सब सहा। इससे भी अनुराग का परिचय आप को नहीं मिली? मैं ने जब बलिदान की बात पहिले सुनी थी तब कुछ भी विचलित नहीं हुई थी किन्तु मैंने जब सुना था कि आप का अनुराग मुझ पर नहीं है तब मैं कितनी विचलित हुई थी सो आप ने नहीं सुना? उससे भी आप को अनुराग का परिचय नहीं मिला?

विजय०। नहीं राजकुमारि! मैं यह नहीं कहता हूं, तुम रोओ न, मेरे कहने का यह अभिप्राय था कि जो पुरुष ऐसा निष्ठुर कार्य्य कर सकता है, वह पिता नाम के योग्य नहीं। जिसने हमारी इस भांति प्रतारणा की उसकी भक्ति हम क्योंकर करें?

सरोजिनी। राजकुमार! यह बात कितनी सत्य है कितनी मिथ्या है, इसे बिना जाने आप उन्हें क्योंकर कह सकते हैं? एक तो नाना चिन्ता से उनका हृदय जर्जरित हो रहा है उस पर जो सुनेंगे कि आप बिना कारण उनकी घृणा करते हैं तो वे अत्यन्त दुःखी होंगे। मैं कहती हूं कि उन्हों ने आप को प्रतारणा कभी नहीं की। इस विषय में आप उन से पूछिये, लोगों के कहने से एक बारगी न विश्वास कर लिया कीजिये॥

विजय०। क्याही आश्चर्य्य की बात है राजकुमारि! रामदास की बात पर भी तुम्हें विश्वास नहीं होता।

(राजमहिषी और उनकी सहचरी अमला का प्रवेश)

राजम०। सर्वनाश हो गया! सवनाश हो गया, रामदास की बात सब सत्य है। वत्स विजयसिंह जो तुम अब न बचाओगे तो अब रक्षा नहीं है हमने बहुत कहला भेजा परन्तु महाराज ने हम से भेट न की, मन्दिर के चारो ओर अस्त्रधारी रक्षक खड़े कर दिए गए हैं उन्हो ने हमें मन्दिर में घुसने न दिया।

बिजय०। अच्छा देवि! अब मैं महाराज के यहां जाता हूं देखता हूं कि वे मुझे कैसे रोकते हैं? (तलवार निकाल कर गमनोद्यत।)

सरोजिनी! राजकुमार जाइये न, जाइये न, थोड़ी देर ठहरिये।

बिजय०। (लौट कर) राजकुमारि! मुझे निवारण न करो। इस रूप झूठ मूठ अनुरोध करना तुम्हें अनुचित है।

राजम०। बेटी तू यह क्या कहती है? तुझे क्या प्राण का कुछ भी भय नहीं है? अब भी ठहरने का समय है? (बिजयसिंह से) नहीं बेटा तुम अभी जाव, इसकी बात न सुनो।

सरोजिनी। राजकुमार! थोड़ी देर ठहरो। मां मेरी बात सुनो और राजकुमार को वहां अभी न जाने देव। पिता के ऊपर वे अत्यन्त कुपित हैं, जो वहां ये गये तो बड़ी बिपत्ति खड़ी हो जायगी क्योंकि मेरे पिता बड़े अभिमानी हैं, इन की कठोर वार्त्ता कभी नहीं सह सकेंगे। (बिजयसिंह से) राजकुमार, आप बहुत न घबराय जो मैं वहां थोड़ी देर और न जाऊंगी, तो वे आप ही बुलाने आवेंगे। यहां आकर देखेंगे कि मां रोती हैं, तब भी क्या उनके मन में दया न उत्पन्न होगी?

बिजय०। क्या राजकुमारि! अब भी तुम उनको दया पर बिश्वास रखती हो? (राजमहिषीसे) देवि। आप राज-

कुमारी को समझाइए, नहीं तो इस कार्य्य में मंगल नहीं है। यहां पर बातों में समय नष्ट करना वृथा है, इस से हम तो जाते हैं, अब बातों का समय नहीं है अब कार्य्य का समय है।

राजम०। जाव बेटा जाव। इसकी बातों को न सुनो।

विजय०। देवि! हम राजकुमारी के जीवन के सब उद्योग जाकर करते हैं, आप निश्चिन्त होइए। आप को कोई भय नहीं है, यह आप अच्छी भांति जानियेगा, कि जितनी देर हमारी देह में प्राण रहेंगे, तब तक जो देवता भी राजकुमारी की मृत्यु की इच्छा करेंगे तो भी व्यर्थ होगा। अब हम जाते हैं।

(विजयसिंह का प्रस्थान)

सरोजिनी। मां तुम ने क्यों राजकुमार को जाने दिया, जो पिताजी को उन्होंने कुछ कहा तो तो —

राजमहिषी। आओ बेटी आओ (जाते हुए) उस पाखण्ड की वार्ता मेरे सामने न कहो।

सरोजिनी। क्या मां!! तुम भी उनको पाखण्ड कहती हो?

(सभों का प्रस्थान)

॥ इति द्वितीय गर्भाङ्क ॥

॥ तृतीय अंक समाप्त ॥

चतुर्थ अङ्क।

प्रथम गर्भाङ्क।

डेरों के निकट उद्यान।

(रोशनयार और मुनिया का प्रवेश)

मुनिया। सखी! तुम जो कहती थी कि सरोजिनी के ऊपर फ़ौरन् ही कोई आफ़त आ पड़ेगी सो तो देख पड़ता है सच ही निकला मैंने सुना है कि थोड़ी ही देर में उसका बलिदान होगा।

रोशन०। तुम क्या जानती हो कि उसकी मौत होगी? हां यह तो सच है कि बलिदान की सब तैयारी होगई है, लेकिन मुझे तो अब भी यक़ीन नहीं होता, जब राजमहिषी चिल्ला २ कर रोवैंगी जब सरोजिनी गिड़गिड़ा कर रोवैगी, जब विजयसिंह गुस्से होकर धमकावेंगे, तब भी बहिन क्या लक्ष्मणसिंह का दिल नरम न होगा? नहीं बहिन! खुदा ने सरोजिनी की किस्मत में मौत नहीं लिखी है, यह उम्मेद बे फ़ायदा है, मुझे सिर्फ़ रंज ही मिलना बदा है, सभों को क़ादिर मुतलक़ ने खुश किया है सिर्फ़ मुझी ही को कम-बख़्त बनाया है।

मुनिया। अच्छा बहिन! जो सरोजिनी मर गई तो तुम्हें क्या फ़ायदा होगा, क्या बिजयसिंह तुम्हें प्यार करने लगेंगे?

रोशन०। मैं अब किसी का प्यार नहीं चाहतीहूं जिसके लिये दिल व जान दिया उसने एक दफ़: भी मेरी ओर फिर

कर न देखा, सखो ! अब मैं मुहब्बत नहीं चाहती हूं, अब मैं होश में आई हूं। लेकिन सरोजिनी का सुख मुझ से न देखा जायगा मैंने पहिले ही तुम से कह दिया था कि या तो वहीं मरैगी नहीं तो मैंहीं मरूंगी, अब इन दोनों बातों मे जो होने को होगा सो होगा, फौज में जिन्हों ने दैववाणी की बात नहीं सुनी है उनसे मैं अभी जाकर कह दूंगी, यह बात सुन कर वे जरूर सरोजिनी के खून के लिये पागल हो जावैंगे मुझे कोई जानता भी तो नहीं है, और भेष से मैं मुसलमान न जान पड़ूंगी।

सुनिया। अच्छा बहिन, इस से फ़ायदा क्या होगा ?

रोशन०। सुनिया ! तुम नहीं जानती हो, इस से हमारे मुल्क का फायदा होगा राजपूत फौज और लक्ष्मणसिंह अगर बलिदान देने की तरफ होंगे और बिजयसिंह की उस में सलाह न होगी तो जरूर उन में झगड़ा हो जायगा, कहां तो वे मिल कर मुसलमानों से लड़ने आये है कहां आपुस में लड़ने लगैंगे, हमारे कैद कर लाने का बदला तब अच्छी तरह होगा, हमारे मुल्क की फ़तह होगी, काफिर हिन्दुओं की हार होगी, सखी ! इन बातों स भी तुम्हारा दिल खुश नहीं होता ? उस बलिदान से हमारा फ़ायदा है और हमारे मुल्क का भी फ़ायदा है।

(नेपथ्य में पद शब्द)

सुनिया। बहन! किसी के पैर की आहट सुन पड़ती है, जान पड़ता है कोई आता है। आँय ये तो राजमहिषी आतीं हैं, चलो बहिन चलें, इस शेरनी के सामने से भागें।

रोशन०। हां चलो यहां से चलें।

(रोशनयार और सुनिया का प्रस्थान)

(राजमहिषी और अमला का प्रवेश)

राजम०। देखा अमला मेरी लड़की को देखा! कहां तो प्राण बचने की पड़ी है, कहां अपने बाप की ओर से इतना कहती है, यह तो उनको इतना चाहती है और वे उस के गले पर छुरी फेरा चाहते हैं, वे यहां यह पूछने अवश्य आवेंगे कि सरोजिनी को अभी तक क्यों नहीं भेजा, वे यह जानते हैं कि मुझ से अपने मनका भाव छिपा सकते हैं? यह देखो आते हैं, पहिले मैं इस विषय की बात न छेड़ूंगी, देखें कब तक अपने मन का भाव छिपा सकते हैं।

(लक्ष्मणसिंह का प्रवेश)

लक्ष्मण०। महिषी! यहां क्या करती हो? सरोजिनी कहां है? मैंने उसके लिये बारबार मनुष्य पठाया तो भी न भेजा यह कैसी बात है? मेरे आदेश की अवहेला करती हो तुम क्या सोचती हो कि जो उसके साथ मन्दिर न जाने पावोगी तो उसको न भेजोगी, चुप क्यों हो उत्तर देव।

राजम०। सरोजिनी तो जाने के लिये प्रस्तुत है, जो अकेले

ही जाना अवश्य है तो अभी जायगी; इसकी क्या चिन्ता है? परन्तु महाराज! आप से थोड़ी भी विलम्ब नहीं सही जाती?

लक्ष्मण०। विलम्ब कैसी?

राजमहिषी। यही कि आपके सब उद्योग और यत्न प्रस्तुत हो गये?

लक्ष्मण०। देवि! भैरवाचार्य्य प्रस्तुत हैं, विवाह के समस्त उद्योग हो गये हैं, मुझे जो कुछ सामग्री करनी थी सब कर चुका हूं यज्ञ की सामग्री भी—।

राजम०। यज्ञ में जो बलिदान होगा उसकी भी सब सामग्री हो चुकी?

लक्ष्मण०। बलिदान! यह क्यों पूछती हो, बलिदान होगा यह तुम से किसने कहा, ओः बलिदान की बात पूछती हो? हां हां आज एक लक्ष बकरों का बलिदान होगा।

राजम०। आप केवल बकरों के बलिदान से संतुष्ट होंगे?

लक्ष्मण०। यह क्या? यह क्या पूछती हो? और क्या बलिदान होगा?

राजम०। तो सरोजिनी को इतना शीघ्र ले जाने की क्या आवश्यकता है?

लक्ष्मण०। आंय, सरोजिनी का बलिदान? यह तुम से कौन कहता था?

राजम०। मैं पूछती हूं कि सरोजिनी को इतना शीघ्र ले जाने की क्या आवश्यकता है? बलिदान की बात मैं नहीं कहती हूं।

लक्ष्मणसिंह। आंय, ले जाने का क्या प्रयोजन है! यही तो पूछती हो? सो, सो—

(सरोजिनी का प्रवेश)

राजम०। आओ बेटी आओ महाराज तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे हैं। अपने बाप को प्रणाम करो, ऐसे बाप और किसी के न होंगे; वह तुम्हें इतना प्यार करते हैं कि तुम्हें काटने के लिये आपही लिवाने आये हैं। (क्रन्दन)

लक्ष्मणसिंह। यह क्या? यह क्या कहती हो? (सरोजिनी से) बेटी! तुम रोती क्यों हो? यह क्या? यह तो दोनों रोने लगीं हुआ है क्या यह तो कहो?

राजमहिषी। हुआ क्या है क्या आप नहीं जानते हैं? क्या ही आश्चर्य की बात है, कि अब भी आप छिपाने की चेष्टा करते हैं!

लक्ष्मणसिंह। (स्वगत) रामदास!—हतभागा रामदास! तूही ने यह सब प्रकाश कर दिया तूही ने मेरा सर्वनाश कर दिया।

राजमहिषी। कहिये, अब आप चुप क्यों हैं?

लक्ष्मणसिंह। हा! (दीर्घ निःश्वास)

सरोजिनी। पिताजी! आप व्याकुल मत होइये; आप

जो आदेश करेंगे मैं वही पालन करूंगी। आप ही से यह जीवन पाया है, आज्ञा हो तो अभी आप के चरणों पर उत्सर्ग करदूं; यह आप ही का धन है, जिस समय चाहिये उसी समय इसको फेर लीजिये, मेरा इस में कुछ भी अधिकार नहीं। आप क्यों वृथा चिन्ता में मग्न हैं, मेरे शरीर में आप ही का रक्त है जब चाहिये इसे ले लीजिये।

लक्ष्मणसिंह। (स्वगत) ऊः। इसकी प्रत्येक बात से हृदय विद्ध हुआ जाता है; आः। अब नहीं सहा जाता। देवी चतुर्भुजा की बात मैं कभी न सुनूंगा, भैरवाचार्य्य, रणधीर—किसी की बात न मानूंगा—अब मेरे अदृष्ट में जो कुछ होगा सो होगा॥

सरोजिनी। पिताजी! मेरी जो सब इच्छा थी, सुख की आशा थी, सो इस जीवन में न पूर्ण होगी यह तो सत्य है परन्तु इसके निमित्त मैं कुछ भी नहीं चिन्ता करती, किन्तु हमारी माता शोक पावैंगी, और उनको इस जन्म में फिर न देखने पाऊंगी इस बात को जब सोचती हूं तब—

राजमहिषी। (सरोजिनी को कठालिङ्गन पूर्व्वक) बेटी! यह बात मुख से न निकाल; तू मुझ को छोड़कर कभी न जाने पावैगी; तेरे पाखण्ड पिता की सामर्थ नहीं कि तुझे यहां से ले जा सकै॥

लक्ष्मणसिंह। ऊः।—

सरोजिनी। पिताजी! मैं नहीं जानती थी कि विधाता इतना शीघ्र मेरा जीवन शेष करेगा, जो तलवार यवनों के लिये तेज की जाती थी उस की प्रथम परीक्षा मेरे ही ऊपर होगी यह मैं स्वप्न में भी न जानती थी, पिताजी! मैं मृत्यु के भय से यह बात नहीं कहती हूं मैं भीरुता प्रकाश करके बाप्पारावल के बंश को कभी न कलंकित करूंगी; मेरा यह क्षुद्र प्राण यदि आप के कार्य्य में आवे वा देश के कार्य्य में आवे तो मैं कृतार्थ हूंगी, किन्तु पिताजी! (रोते हुये) यदि बिना जाने बूझे आप के निकट अपराधी हुई होऊं और उसी से मुझे दण्ड देते हो तो क्षमा प्रार्थना करती हूं॥

राजमहिषी। बेटी! तुझ को मैं कभी न जाने दूंगी; मुझे मारे बिना तुझ को कभी न ले जाने पावेंगे॥

लक्ष्मणसिंह। (स्वगत) ऊः! क्या ही बिषम संकट में पड़े! एक ओर स्नेह ममता है और दूसरी ओर कर्त्तव्य कर्म; इतना करके अब कैसे चुप हो कर बैठ रहूं? और फिर रण-धीर को क्या मुख दिखाऊंगा? सैन्यगण से क्या कहूंगा? अपने राज्य ही को किस भांति बचाऊंगा?

सरोजिनी। पिताजी! मैंने क्या कोई अपराध किया है?

लक्ष्मणसिंह। हां बेटी! तूने कोई अपराध नहीं किया है, जान पड़ता है कि पूर्व्व जन्म में मैंने ही कोई गुरुतर पाप किया था इस से देवी चतुर्भुजा मुझ को इस भांति

कठोर दण्ड देती हैं, नहीं तो क्यों वे बलि चाहतीं ? बेटी ! उन्हीं ने दैववाणी की थी कि जो मैं तुझे उन के चरण पर उत्सर्ग न करूंगा तो चित्तोर पुरी कभी न रक्षा पावैगी, तेरे बचाने के लिये मैंने बहुत चेष्टा की परन्तु कुछ भी न हुआ, इसी लिये प्रधान सेनापति रणधीसिंह से न जाने कितना विरोध हो गया, पहिले तो मैं किसी भांति न सम्मत होता था, और फिर भी रामदास द्वारा अपने प्रथम आदेशके विरुद्ध कहला भेजा था; परन्तु करम लेख को कौन खण्डन कर सकता है ? रामदास से तुम से भेटही न हुई तुम भी आकर यहां उपस्थित हो गईं, बेटी ! दैव के विरोध में कौन जय लाभ कर सकता है ? तेरे हतभाग्य पिता ने तेरे बचाने के लिये कितनी चेष्टा की परन्तु सब वृथा हुई, अब मैं जो दैववाणी को न मानू तो भी तो रक्षा नहीं है, रणोन्मत्त यवनद्वेषी राजपूत सेनापति-गण मुझ को अभी तलवार से खण्ड २ कर के मेरे प्रतिद्वन्दी किसी राजकुमार को राजा बना देंवे, इस से बेटी ! अब कोई आपत्ति न करो अपनी आसन्न विपद निश्चय जान कर मन को दृढ़ करो।

राजमहिषी। महाराज। आप पिता होकर ऐसी बात कहते है ? आप का हृदय क्या एक-बारगी पाषाण हो गया आप के दया माया क्या कुछ भी नहीं है ? ज:—।

सरोजिनी। पिताजी ! आप का अनिष्ट, प्राण रहते २ मैं

कभी न देख सकूंगी अपना जीव बचा कर आप को बिपद्-ग्रस्त करूंगी यह आप कभी न सोचिये (महिषी से) मां। पिताजी का तिरस्कार न करो, उनका क्या दोष है जब देवी चतुर्भुजा ने इस भांति आदेश किया है तब वे क्योंकर—

राजमहिषी। बेटी। तू भी इस बात पर बिश्वास करती है? देवी चतुर्भुजा ने इस भांति आदेश किया है? कभी नहीं, उसके सेनापतियों ने उसे यह परामर्श दिया है, और पीछे से वे उसका राज्य कहीं छीन न लें इसी भय से वह कांपता है।

लक्ष्मणसिंह। देखो बेटी! जिस बंश में तुम ने जन्म लिया है उसका इस समय परिचय देव जिन देवताओं ने तुम्हारी मृत्यु का आदेश दिया है, निडर होकर मृत्यु को आलिंगन करके उनको लज्जित करो; और जो राजपूत गण तुम्हारे बलिदान के लिये इतने व्यग्र है वे भी जानें कि बाप्पारावल का बीर रक्त तुम्हारे देह में भी बहता है॥

राजमहिषी। महाराज! आप इस निष्ठुर कार्य्य में परम पूजनीय बाप्पारावल के बंश का उपयुक्त परिचय देते है; दुहिताघाती पाखण्ड! तुझ से कुछ भी न बचा, तुझ को कुछ भी न बचा, तुझ को कुछ भी असाध्य नहीं है, इस समय मुझ को मार कर अपनी सकल मनोकामना पूर्ण कर। नृशंस! निष्ठुर! यही तेरे शुभ यज्ञ का अनुष्ठान है? यही बिवाह का उद्योग है? हाय! जब तूने मेरी बेटी को यम

के हाथ में समर्पण करने का विचार कर मिथ्या विवाह की बात लिखी थी तब तेरा हृदय कुछ भी न विचिलित हुआ? लेखनी कुछ भी न कांपी? क्योंकर तू मुझ को इस भांति मिथ्या बात लिख सका? आश्चर्य्य। अभी तू ने कहा था कि उस के बचाने के लिये बहुत चेष्टा की बहुतों के साथ विवाद किया? किस भांति का विवाद किया? विवाद करते २ युद्ध करते २ पृथ्वी रक्त की धार से डूब गई! मृत शरीरों से रणक्षेत्र को आच्छादित कर दिया! फिर कहता था कि यदि दैववाणी को न मानूंगा तो मेरे प्रतिद्वन्दी अवसर पा कर सिंहासन छीन लेंगे, तुझ को कुछ भी लज्जा न आई? अपनी कन्या के जीवन की अपेक्षा राज्य अधिक प्यारा हुआ? क्या ही आश्चर्य्य की बात है! पिता अपनी निर्दोषी कन्या को वध करैगा ऐसी बात तो कभी सुनने में भी नहीं आई; किस भांति तू ऐसा काम करैगा यह मैं नहीं जान सकती, धिक! धिक! यह निष्ठुर व्यवहार देख कर मैं तो एक बारगी हत बुद्धि हो गई, अरे! तेरी आंखों के सामने तेरी कन्या का बलिदान होगा और तू अम्लान बदन हो कर देखैगा? तेरे हृदय में क्या कुछ भी कष्ट न होगा? और मैं कहां तो विवाह करने आई थी कहां उसका बलि देकर, अपनी सोने की प्रतिमा को विसर्ज्जन करके, घर फिर जाऊंगी? महाराज! सरोजिनी को मैंने उसके पिता के हाथ

में समर्पण किया था यम के हाथ में नहीं समर्पण किया, यदि बलि देना चाहते हो तो पहिले मुझ को बलि देव। आप हज़ार भय दिखाइये लाख यंत्रणा दीजिये, मैं बेटी को कभी न जाने दूंगी मुझे टुकड़े २ किये विना उसको आप कभी न ले जाने पाइयेगा!

लक्ष्मण०। देखो महिषि! मुझ को तिरस्कार करना वृथा है, करम लेख मिटाना किसी की सामर्थ्य नहीं है, घटनास्रोत अब इतना प्रबल हो गया है कि मैं अब उसको रोक नहीं सकता, रोकने से भी कुछ फल न होगा, अभी उन्मत्त सैन्य बल पूर्वक उसको——

राजमहिषी। निष्ठुर स्वामिन्! सरोजिनी का पाखण्ड पिता! आओ देखती हूं कि सिंहनी के निकट से उसका बच्चा क्योंकर तू ले जाता है? तू अकेले क्या ले जायगा - बुलाव, अपनी उन्मत्त सेना को बुलाव - अपने दिग्विजयी सेनापतियों को बुलाव। देखती हूं उनका कितना बल है। यदि तेरे सदृश उनका हृदय पाषाण की अपेक्षा कठिन न होगा तो शोकविह्वला जननी का क्रन्दन सुन कर उनका हृदय सैकड़ों टुकड़ों में बिदीर्ण हो जायगा। (सरोजिनी से) बेटी! अब तू मेरे साथ आ देखूंगी कौन तुझे मेरे निकट से लिये जाता है!

सरोजिनी। मां! पिताजी को क्यों तिरस्कार करती हो? उनका क्या दोष है?

राजमहिषी। आओ बेटी आओ, वह अब पिता नाम के योग्य नहीं है। (सरोजिनी का हाथ आकर्षण पूर्वक प्रस्थान।)

लक्ष्मण०। इस सिंहिनी की तीव्र भर्त्सना और हृदय विदारक आर्तनाद ही का मैं अभी तक भय करता था। मैं तो इस समय उन्मत्त आप हूं, उसमें भी महिषी की भर्त्सना और सरोजिनी की अटल भक्ति! ऊः--अब नहीं सहा जाता मातः चतुर्भुजे! तुम ने ऐसा कठोर आदेश दे कर भी क्यों पिता का कोमल हृदय रक्खा है? यदि मेरे द्वारा अपना आदेश प्रतिपालन कराना चाहती हो तो मेरी देह से यह हृदय उन्मूलित करके फेंक देव।

(बिजयसिंह का प्रवेश)

बिजयसिंह। महाराज! आज एक अद्भुत जनश्रुति सुन पड़ती है। वह बात ऐसी भयानक है कि कहते ही मेरा सब शरीर कण्टकित होता है। क्या आप की अनुमति से आज सरोजिनी का बलिदान होगा, आप ने आज क्या स्नेह, माया, मनुष्यत्व, सब को एक बारगी जलांजलि देदी? मेरे साथ बिवाह होगा इस छल से उसको मन्दिर ले जाइयेगा? क्या यह सत्य है?

लक्ष्मणसिंह। बिजयसिंह! हमारा क्या अभिप्राय है, इसको हम सब से नहीं कहते। हमारा क्या आदेश है सो सरोजिनी अभी तक नहीं जानती; जब उपयुक्त समय होगा

तब ज्ञापन करूंगा, तब तुम भी जानोगी और सब सेना भी जानेंगी।

विजयसिंह। आप जो आदेश करियेगा वह हम सब जानते हैं।

लक्ष्मणसिंह। यदि जानते हो तो क्यों पूछते हो?

विजयसिंह। क्यों पूछते हैं? आप क्या जानते हैं कि मैं आप के ऐसे जघन्य कार्य्य का अनुमोदन करूंगा, मैं अपनी आंखों के सामने सरोजिनी का बलि दिया जाना देखूंगा? यह कभी न सोचिये; आप यह अच्छी भांति जानिये कि मेरा अनुराग, मेरा प्रेम उसका अक्षय कवच होकर चिर दिन तक रक्षा करेगा!!!

लक्ष्मणसिंह। देखो विजय! तुम्हारी बातों से जान पड़ता है कि तुम मुझे भय दिखाने की चेष्टा करते हो—यह जानते हो कि तुम किस से बात करते हो?

विजयसिंह। आप यह जानते हैं कि आप किस के प्राण लेने पर उद्यत हैं?

लक्ष्मणसिंह। मेरे परिवार में क्या होता है क्या नहीं होता इसमें तुम्हारे हस्तक्षेप करने का कुछ प्रयोजन नहीं। मैं अपनी कन्या से चाहे जो बर्ताव करूं उस में तुम्हें बोलने का कुछ अधिकार नहीं है॥

विजयसिंह। नहीं महाराज! अब सरोजिनी आप की नहीं है, जब आप उसके साथ ऐसा अस्वाभाविक व्यवहार

करने पर उद्यत हैं तब, सन्तान पर जो पिता का अधिकार होता है, वह आप से जाता रहा, अब सरोजिनी मेरी है, जब तक मेरी देह में एक बुन्द भी रक्त रहेगा तब तक आप उसको मेरे पास से कभी न ले जाने पाइयेगा, आप को स्मरण होगा कि अपने सरोजिनी का मेरे साथ बिवाह करना अङ्गीकर किया था अब इसी अङ्गीकार सूत्र के अनुसार सरोजिनी पर मेरा अधिकार है, राजमहिषी ने भी अभी हम दोनों के हाथ सम्मिलित कर दिये थे, और आप भी तो मेरे साथ बिवाह करने के छल से उसे बुलाने आये थे, और जो कुछ होय सो होय, यह तो बताइये कि आप ऐसा गर्हित कार्य्य क्यों करते हैं ?

लक्ष्मणसिंह। जो देवता सरोजिनी का प्रार्थी हुआ है तुम उसकी भर्त्सना करते हौ, भैरवाचार्य्य की भर्त्सना करते हौ, रणधीरसिंह की भर्त्सना करते हौ, सब सैन्य मण्डली की भर्त्सना करते हौ और सब के पीछे अपनी भर्त्सना करते हौ।

विजयसिंह। क्या। मैं। मैं भी भर्त्सना का पात्र हूं ?

लक्ष्मणसिंह। हां तुम भी हौ, तुम्ही सरोजिनी के मृत्यु के कारण हौ, मैंने जब कहा था कि मुसलमानों के साथ लड़ने का काम नहीं है तब तुम ने महा उत्साह से हमें युद्ध में प्रवर्तित किया, यह तुम्हें नहीं स्मरण ? है। तुम्ही ने

तो हम से कहा था कि महाराज पृथ्वी पर ऐसी कौन वस्तु है जो मातृ भूमि के लिये अदेय हो। मैंने सरोजिनी के बचाने के लिये एक पथ खोल दिया था किन्तु तुम उस राह पर न चले, मुसलमानों से युद्ध बिना और किसी बात में सम्मत ही न हुये, मैंने तो बड़ी चेष्टा की कि युद्ध बन्द हो जाय परन्तु तुम ने मेरी एक न सुनी, अब जाव अपनी मनस्कामना सिद्ध करो, अब सरोजिनी की मृत्यु युद्ध की राह खोल देगी॥

बिजयसिंह। ऊः! क्याही भयानक बात सुननी पड़ी। शुद्ध अत्याचार ही नहीं है परन्तु उसके साथ मिथ्या बात भी है! तब क्या मैंने बलि देने की बात सुनी थी? और जो सुना होता तो क्या मैं उसको अनुमोदन करता? कभी नहीं, मेरे यदि सहस्र प्राण होवैं तो भी मैं देश के लिये बिना सोचे सब दे सकता हूं परन्तु एक निर्दोषी अबला के प्राण जावैं इस में मैं कभी न सम्मति दूंगा, और देवता ऐसो अन्याय की बात के लिये आदेश करैंगे यह भी मुझे बिश्वास नहीं होता, जो ऐसा कहते हैं वे देवताओं की अब मानना करते हैं उन देवनिन्दकों की बात मैं नहीं सुनता।

लक्ष्मणसिंह। क्या! तुम्हारी इतनी स्पर्द्धा कि तुम मुझे देवनिन्दक कहते हो? तुम जाव, अपने देश को चले जाव, जिस प्रतिज्ञा-पाश से तुम बँधे थे उस से हम ने तुम्हें मुक्त

कर दिया; तुम्हारे सदृश साहसी हमें बहुत से मिल रहेंगे अनेक हमारे आज्ञानुवर्ती होवेंगे; तुम जो हमारी अवज्ञा करते हो यह तुम्हारी बातों से अच्छी भांति जान पड़ता है, जाव हमारी आंखों के सामने से दूर हो, जिन समस्त बन्धनों से हमारे साथ तुम बँधे थे उनसे तुम मुक्त हुये, अब जाव॥

बिजयसिंह। जो बन्धन अब भी मेरे क्रोध को रोके हैं उनको आप धन्यवाद दें, उन्हीं बन्धनों के कारण अब की बार आप की रक्षा हुई, आप सरोजिनी के पिता हैं इसी से आप की मर्य्यादा रखता हूं; नहीं तो जो आप सकल पृथ्वी के अधीश्वर होते तो भी इस तलवार से बच कर न जाते, और एक बात और सुनिये कि मैं सरोजिनी की रक्षा अवश्य करूंगा; मेरी देह में जब तक एक बिन्दु मात्र भी रक्त रहैगा तब तक आप और आप की समस्त सैन्यमण्डली एकत्र होकर भी सरोजिनी का प्राण विनाश न कर सकैगी।

(बिजयसिंह का प्रस्थान।)

लक्ष्मणसिंह। (स्वगत) हाः। बिधाता बहुत मेरे बिमुख हो गया, सब घटना सरोजिनी के प्रतिकूल होती है, कहां तो मैं सोचता था कि कोई अब भी बचाने का उपाय मिल जावै कहां यह एक नया प्रतिबन्धक खड़ा हुआ, जो अब स्नेह-वश सरोजिनी को बलिदान से बचाऊं तो बिजय-

सिंह जानैगा कि मैंने उसके भय से ऐसा काम किया है, नहीं यह कभी न होगा, कोई है ? प्रहरी !

(प्रहरीगण के साथ सूरदास का प्रवेश।)

लक्ष्मणसिंह। (स्वगत हा ! मैं क्याही भयानक कार्य्य करने पर प्रवृत्त होता हूं ! अब यह निष्ठुर आदेश मैं क्योंकर देऊं ? मूर्ख सट्टश मैं अपने हाथ अपने ही पैर में कुल्हाड़ी मारता हूं ! उस निर्दोषी सरला बाला का क्या दोष है ? सरोजिनी पर मैं क्योंकर निर्दय होऊं ? नहीं मैं कभी न हूंगा, देवी का वाक्य मैं न सुनूंगा; जो कुछ होना होगा सो होगा, परन्तु मुझे अपनी मर्यादा पर क्या कुछ भी दृष्टि न रखनी चाहिये ? क्या बिजयसिंह ही की प्रातिज्ञा पूर्ण होगी ? जो ऐसा होगा तो वह जानैगा कि मैंने उसके भय से ऐसा किया है और फिर उसकी सर्द्दा का अन्त न रहेगा, अच्छा, उसके दर्प चूर्ण करने का क्या और कोई जपाय नहीं है ? वह सरोजिनी को बहुत प्यार करता है; उसके साथ सरोजिनी का बिवाह न करके और किसी से कर दें तो उसको उचित दण्ड होगा; हां, यही अच्छा होगा। (प्रकाश्य) सूरदास। तुम राजमहिषी और सरोजिनी को यहां ले आओ; उन से कहो कि कुछ भय नहीं है॥

सूरदास। जो आज्ञा महाराज॥

(प्रहरीगण के साथ सूरदास का प्रस्थान।)

लक्ष्मणसिंह। मातः चतुर्भुजे। तुम क्या हमारी कन्या के रक्त के लिये नितान्तही प्यासी हौ? जो ऐसा होगा तो उसकी रक्षा करना मेरी सामर्थ्य से बाहर है, कोई मनुष्य की सामर्थ्य नहीं कि उसकी रक्षा करै; जो कुछ होय एक बार चेष्टा तो करैं॥

(राजमहिषी, सरोजिनी, रोशनयार, मुनिया रामदास सूरदास और प्रहरी गण का प्रवेश)

लक्ष्मणसिंह। (महिषी से) ये लेव देवि। सरोजिनी को मैंने तुम्हारे हाथ में सौंपा उसको ले कर इस दयाशून्य कठोर स्थान से भागो, किन्तु सुनो देवि! इसके बदले में तुम्हें एक बात सुननी होगी, सरोजिनी का विजयसिंह से विवाह कभी न करैंगी उसने आज हमारा अपमान किया, (सरोजिनी से) देखो बेटी। जो तुम हमारी कन्या हो तो विजयसिंह को एक बारगी भूल जाव॥

सरोजिनी। (स्वगत) हा:! जिसका मैं भय करती थी वही हुआ।

लक्ष्मण०। देखो महिषी। रामदास, सूरदास और यह प्रहरी गण तुम्हारे साथ जावेंगे, किन्तु सुनो इस बात को कोई विन्दुमात्र भी न जानै, छिप कर यहां से प्रस्थान करो जिसमें रणधीरसिंह और भैरवाचार्य्य इस बात को न जानैं, और महिषि देखो सरोजिनी को भली भांति छिपा कर ले

जाव जिस में सेना के लोग जानें कि उसको छोड़ कर तुम अकेली जाती हो, ले जाव भागी देरी मत कर। रक्षकगण! महिषी के पीछे जाव।

रक्षक०। जो आज्ञा महाराज॥

राजमहिषी। महाराज आप के इस आदेश से फिर देह में प्राण आये (सरोजिनी से) आओ बेटी यहां से भगें।

सरोजिनी। (स्वगत) हा: अब मेरे बचने में सुख क्या है? जिसको मैं एक मुहूर्त भी नहीं भूल सकती हूं उसको जन्म भर के भूलने के लिये आज्ञा हुई है, प्राण रहते उसको क्यों कर भूलूं? और पिताजी की आज्ञा क्योंकर पालन न करूं? फिर देवी चतुर्भुजा मेरा जीवन चाहती हैं मेरे बलिदान दिये जाने पर चित्तौर का कल्याण निभर करता है यह जान बूझ कर भी क्योंकर भागूं मेरे बलिदान ही से सब रक्षा होती है परन्तु पिता जी ने यह राह भी बन्द कर दी, हा!

लक्ष्मणसिंह। भैरवाचार्य्य के जानने के पहिले तुम लोग भागो मैं जाकर आज दिन भर के लिये यज्ञ बन्द करने का उद्योग करूंगा जिस में तुम्हें भागने का अवसर मिले॥

सरोजिनी। पिताजी! आप तो कहते थे कि देवी चतुर्भुजा ने मेरे बलि दिये जाने के लिये आज्ञा दी है, अब जो उनकी आज्ञा उल्लंघन करियेगा तो क्या मंगल होगा?

राजम०। आओ बेटी आओ! तुझे इन बातों से क्या प्रयोजन है।

लक्ष्मणसिंह। बेटी! तुम्हारा काहे में मङ्गल है, और काहे में अमङ्गल है, यह तुमसे हम अच्छी भांति जानते हैं।

राजम०। आओ बेटी आओ, अब देरी न करो, (सरोजिनी को हस्ताकर्षण पूर्वक राजमहिषी का प्रस्थान। रोशनयार, मुनिया और रक्षकगण का भी प्रस्थान)

लक्ष्मणसिंह। (स्वगत) मातः चतुर्भुजे! विनीत भाव से आप से प्रार्थना करता हूं, कि ये बच जावें, अब उनको यहां न लौटाय लाना, मैं और कोई उत्कृष्ट बलि दे कर आप को तुष्ट करूंगा।

(लक्ष्मणसिंह का प्रस्थान)

इति प्रथम गर्भाङ्क।

द्वितीय गर्भाङ्क।

मन्दिर के समीपस्थ ग्राम्य पथ।

(रोशनयार और मुनिया का प्रवेस)

रोशनयार। मुनिया! मेरे साथ इधर आ, उधर राह नहीं है।

मुनिया। सखि! यहां ठहरने से क्या होगा? चलो उन्हीं लोगो के साथ चलें।

रोशनयार। नहीं बहिन! ठहरो मेरा तो यह क़सद है कि या तो मैंही मरूंगी या सरोजिनी मरैगी, आओ चल कर इन लोगों के भागने की बात भैरवाचार्य्य से कह दें, अरे यह भैरवाचार्य्य तो आपही इधर आते हैं, यह बड़ा सुभीता हुआ।

(भैरवाचार्य्य नामधारी महम्मद अली और रणधीरसिंह का प्रवेश)

महम्मद०। न जाने क्यों सरोजिनी को महाराज ने अभी तक मन्दिर में नहीं भेजा।

रणधीरसिंह। हां महाशय! मैं भी यह बात नहीं समझ सकता, जान पड़ता है कि महाराज का मन फिर गया, वे ऐसे अस्थिरचित्त हैं कि ऐसा करना कुछ आश्चर्य्य की बात नहीं है, अच्छा इन दोनों स्त्रियों से पूछें ये राजकुमारी की सहचरी जान पड़ती हैं, ओ! तुम क्या महाराज के अन्तःपुर में रहती हो?

रोशनयार। हां! हम राजकुमारी की सहेली हैं।

रणधीरसिंह। अच्छा तुम बता सकती हो, कि राजकुमारी अभी तक मन्दिर क्यों नहीं गईं?

रोशनयार। वे तो अभी चित्तौर की ओर गईं।

रणधीरसिंह (आश्चर्यित हो कर) यह क्या!

महम्मद०। आंय? वे क्या चली गईं?

रणधीरसिंह! बेटी। तुम तो ठीक कहती हो?

रोशनयार। मैं ठीक नहीं कहता तो क्या? अभी २ तो वे इसी वन से गई हैं, अभी वन से बाहर भी न निकली होंगी।

रणधीरसिंह। हां तो महाराज हम लोगों की प्रतारणा करते हैं; अब मैं उनकी बात कभी न सुनूंगा; पहिले हम लोगों को देश के स्वार्थ की ओर देखना चाहिये; जब वे उस स्वार्थ के विपरीत कार्य्य करते हैं, तब उनको राजा न कहना चाहिये, महाशय! आइये अपने अधीन सैन्यगण को लेकर उनका मार्ग रोक दें।

महम्मद०। रोशनयार की एक दृष्टि निरीक्षण कर के स्वगत) यह स्त्री कौन है? कुछ २ यह आदिल से मिलती है, परन्तु यह तो हिन्दू है।

रणधीरसिंह। महाशय। आइये उधर देख कर क्या रह गये? क्या सोचते हैं, चलिये अब और कोई चिन्ता का समय नहीं है; चलिये।

महम्मद०। हां चलिये, आप आगे होइये (जाते हुये पीछे देख कर स्वगत) यदि वह चिन्ह होवै तो—

(रणधीरसिंह और महम्मद का प्रस्थान)

रोशनयार। सखि। मेरा काम तो हो गया, अब देखिये खुदा क्या करता है?

मुनिया। बहिन रोशनयार! यह पुरोहित तेरी ओर क्यों देखता था?

रोशनयार। क्या जानें उसको मेरी बात में शक जान पड़ता हो! शायद वह देखता हो कि मैं सचमुच राजकुमारी की सहचरी हूं, या झूठ ही कहती हूं।

मुनिया। हां बहिन, यही होगा, हम मुसलमान हैं, यह तो हमारी देह में लिखाही नहीं कि कोई पहिचाने। यहां पर बिजयसिंह और दो चार सिपाहियों के सिवाय हमें कोई नहीं जानता।

(नेपथ्य में) बलवन्तसिंह तुम दक्षिण की ओर जाव, बीरबल तुम उत्तर जाव और तुम लोग पूर्ब्ब पश्चिम में रक्षा करो, देखो वे किसी भांति निकलने न पावैं, मेरे अधीन सैन्यगण! सेना नायकगण! सब कोई चौकस हो।

रोशनयार। यह देखो फौज चारो ओर से घेरने जाती है, आओ बहिन हम लोग यहां से चलैं।

(रोशनयार और मुनिया का प्रस्थान)

इति द्वितीय गर्भाङ्क।

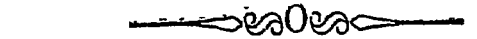

तृतीय गर्भाङ्क।

(मन्दिर के समीप बन)

(राजमहिषी, सूरदास और कुछ रक्षकों का प्रवेश)

राजमहिषी। सूरदास! सरोजिनी और रामदास क्या वन से शीघ्र निकल जाने पावेंगे।

सूरदास। देवि! जिस राह से वे गये हैं, उससे तो वे अब वन के बाहर हो गये होंगे, दो दल अलग २ चलने में भागने का अच्छा सुभीता होता है, और फिर जिस राह से राजकुमारी गई हैं, उसमें पकड़ जाने की कुछ भी सम्भावना नहीं है।

राजम०। (स्वगत) आह! बेटी इस कटीले वन से पैदल कैसे पार होवैगी? हम लोगों के भाग्य में क्या यही था? मैं सकल मेवाड़ की अधीश्वरी हूं, सो मुझको चोर की भांति छिप कर वन से पैदल जाना पड़ता है! जो कुछ हो जो मेरी सरोजिनी बच जाय तो सब कष्ट उठाना सुफल हो जाय।

(नेपथ्य में—इस ओर इस ओर)

(प्रकाश्य) यह किनके पैर का शब्द सुन पड़ता है? सूरदास! चौकस हो! जान पड़ता है कि सैन्यगण हमें पकड़ने आते हैं; यह क्या! हम लोगों को एकबारगी चारों ओर से घेर लिया।

(चारों ओर घेरे हुये नङ्गी तलवारें लिये हुये सैन्यगण का प्रवेश)

सेनानायक। राजमहिषि! मेवाड़ की अधीश्वरि! ज

ननि ! सेनापति रणधीरसिंह के आदेश से हम लोग आप का पथ रोकते हैं,।

राजमहिषी। क्या !! रणधीरसिंह के आदेश से ? रणधीरसिंह जो हमारा अधीन करप्रद एक क्षुद्र राजा है, उसके आदेश से ?

सेना०। राजमहिषि ! हम लोग उन्हीं के अधीन हैं, वे हमारे सेनापति हैं।

राजम०। मैं जानती थी महाराज के आदेश से, आज रणधीरसिंह का आदेश मुझे पालन करना पड़ा ? पथ छोड़ देव, हम आगे जांयगी, राह छोड़ देव मैं कहती हूं।

सेनानायक। देवि ! मार्जना करिये हम लोगों को आदेश नहीं है।

राजमहिषि। आदेश नहीं है ? किसका आदेश नहीं है ? मेवाड़ की अधीश्वरी आदेश करती है, तुम लोग पथ छोड़ देव।

सेनानायक। देवि ! हम लोगों को क्षमा करिये।

राजमहिषि। सूरदास ! रक्षकगण ! तुम्हारे सामने हमारा ऐसा अपमान ?

सूरदास। महाशय ! राजमहिषी का आदेश सुनते हो ? राह छोड़ देव नहीं तो—

सेनानायक। आप चुप रहिये।

राजमहिषी। सूरदास। भीरु! अब भी सहता है? तेरी तलवार क्या केवल लटकाने ही के लिये है?

सूरदास। देवि। केवल आप की आज्ञा की अपेक्षा थी, रक्षकगण! राह निकालो।

(तलवार निकाल कर युद्ध करते २ दोनों दलों का प्रस्थान)

इति तृतीय गर्भाङ्क।

चतुर्थाङ्क समाप्त।

पञ्चमाङ्क।

प्रथम गर्भाङ्क।

(मन्दिर के वन का अपर प्रान्त)

(सरोजिनी और अमला का प्रवेश)

सरोजिनी। अमला! अब मुझे न रोको, मेरे रक्त बिना देवी जी कभी न शान्त होवैंगी। देवताओं से छल करने से हमारी क्या ही भयानक दशा हुई है! देखो हमारी राह रोकने के लिये चारों ओर से शस्त्रधारी पुरुष घेरे हुये हैं, अब भागने का कौन उपाय है? अब मैं मन्दिर में जाती हूं! अमला, मां न जानने पावें, कि पिता ने फिर बुला भेजा है नहीं तो वे अत्यन्त कष्टित होवैंगी।

अमला। राजकुमारि! तुम्हारा मन्दिर में कुछ प्रयोजन

नहीं है। महाराज तो इस समय पागल सदृश हैं, एक बार भागने को कहते हैं, दूसरी बार फिर बुला भेजते हैं, तब क्या उनकी बात सुनने योग्य है? क्यों वहां जाने जाने को कह कर हम लोगों को इतना दुःख देती हो? तुम्हें क्या मरने की बड़ी ही साध है?

सरोजिनी। पिताजी ने जो आज्ञा दी है, उस से मृत्यु शतगुण प्रार्थनीय है, और इसी से जीने की मेरी कुछ भी इच्छा नहीं है।

अमला। राजकुमारि! महाराज ने क्या ऐसी आज्ञा दी है?

सरोजिनी। कुमार विजयसिंह और पिताजी में मनान्तर हो गया है, और उन पर पिताजी की विषदृष्टि हो गई है। इसी से मुझे आदेश किया है कि विजयसिंह को जन्म भर के लिये भुला देव। अमला! क्या इस से मरना नहीं अच्छा? (रोते हुवे) मैं जीते जी कुमार विजयसिंहको न भुलूंगी। मैंने रामदास को कितना निषेध किया, परन्तु उसने न माना, फिर पिता जी के पास गया है; किन्तु अमला अब मुझे जीने की इच्छा नहीं है, अब मरने ही से सब यंत्रणा से उद्धार है।

अमला। क्याही सर्वनाश हुवा है? यह तो मैं कुछ भी न जानती थी।

सरोजिनी। देखो अमला! देवता मुझ पर बड़े सदय

हैं, जो मृत्यु का आदेश करते हैं—अब मैं समझी कि उनकी मुझ पर कितनी कृपा है!—वह कौन आता है?—आंय! ये तो कुमार बिजयसिंह आते हैं!

अमला। राजकुमारि! तो मैं अब जाती हूं।

(अमला का प्रस्थान)

[बिजयसिंह का प्रवेश]

बिजयसिंह। राजकुमारि! मेरे पीछे २ आओ वे लोग जो चारों ओर से हमें घेरे हुये हैं, उन्मत्तवत चिल्लाते हैं, उनके चिल्लाने से किसी भांति भीत न होना। मैं इसी भीषण तलवार से अभी इनकी श्रेणी को भङ्ग करता हूं जो सेना मेरे आधीन हैं वे अभी आने चाहती है, फिर देखेंगे तुम को कौन हमसे छीन ले जायगा। रोती क्यों हो? तुम्हें क्या बिश्वास नहीं होता कि हम तुम्हारी रक्षा कर सकेंगे? अब रोने से कुछ नहीं है, जो कुछ रोने का फल होता तो अब तक देख पड़ता। तुम अपने पिता के पास बहुत रो चुकी हो।

सरोजिनी। नहीं राजकुमार। इससे हम नहीं रोती हैं; हम इस कारण से रोती हैं, कि हमारी तुम्हारी यही पिछली भेट है।

बिजयसिंह। यह क्या? यह पिछली भेट है? तो क्या तुम जानती हो कि हम तुम्हारी रक्षा न कर सकेंगे?

सरोजिनी। राजकुमार! मेरी जीवनरक्षा भी हुई तब भी आप सुखी न होवेंगे।

बिजयसिंह। राजकुमारि! यह क्या कहती हो? तब भी हम न सुखी होंगे? तुम तो अच्छी भांति जानती हो, कि तुम्हारे ही जीवन पर बिजयसिंह की सुखशान्ति है।

सरोजिनी। नहीं राजकुमार! परमेश्वर ने इस हतभागिनी के जीवन सूत्र से आप की सुभाग्यता नहीं बांधी है, सब बिधाता की बिड़म्बना है। अब जो मेरी मृत्यु न भी हुई तो भी आप सुखी न होंगे। आप यह ही सोचिये कि मुसलमानों से जयलाभ होने में आप की कितनी कीर्ति होगी, गौरव की कितनी वृद्धि होगी। फिर देवी चतुर्भुजा ने यह दैववाणी की है, कि जब तक मेरी बलि न दी जायगी तब तक युद्धक्षेत्र में आप लोग कभी न विजयी होंगे। अब देखिये, कि मेरी मृत्यु भिन्न और कोई उपाय देश उद्धार का नहीं है। इसी कारण सब राजपूत सैन्य मेरी मृत्यु की आकांक्षा करते हैं। सो राजकुमार, अब मेरे बचाने की चेष्टा न करिये। आप ने समस्त राजस्थान को मुसलमानों से उद्धार करने की प्रतिज्ञा की है, सो उसी का पालन कीजिये। राजकुमार, मुझे अच्छी भांति समझ पड़ता है, कि ज्योंही मेरी चिता प्रज्वलित होगी, वैसे ही अलाउद्दीन का बिजयदल भी म्लान होगा, उसकी जयपताका दिल्ली के

प्रासाद शिखर से भूतल पर स्खलित होगा, उसका सिंहासन कम्पायमन होगा, शत्रु के गढ़ में क्रन्दनध्वनि होने लगेगी, यवन नारीगण विधवा हो कर मेरी मृत्युही को अपने सर्वनाश का कारण कह कर हाहाकार करने लगेंगी। राजकुमार, इसी आशा से मेरा मन उत्फुल्ल हुवा है, मैं इसी आशा पर प्राण त्याग करने में कुछ भी भय भीत नहीं हूं किञ्चितमात्र भी कातर नहीं हूं, आप इससे निश्चिन्त रहिये मेरी मृत्यु यदि आप की अक्षय कीर्ति का सोपान होय, देश उद्धार का उपाय होय, तो मेरी मनोकामना पूर्ण होय। राजकुमार, अब मुझे जन्म भर के लिये विदा दीजिये।

विजयसिंह! नहीं राजकुमारि, यह मुझ से कभी न होगा। कौन तुम से कहता था, कि चतुर्भुजा देवी ने इस भांति दैववाणी की है, जो यह कहता होगा, वह देवताओं का अपमान करता है। देवता कभी निर्दोषी अबला के रक्त से परिप्लुत होते हैं? यह बात विश्वासयोग्य नहीं हो सकती है। देवता तो तब प्रसन्न होते हैं, जब हम प्राणपण से युद्ध करें। अब इस समय यदि तुम को इस बाहु युगल से रक्षा कर सकूं, तो सकल गौरव को प्राप्त होऊं, और मनोकामना भी सिद्ध होय। आओ, राजकुमारि, देरी मत करो मेरे पीछे २ आओ।

सरोजिनी। राजकुमार, मुझको क्षमा करिये, मैं पिता

जी की आज्ञा क्योंकर उल्लंघन करूं, मैं तो उनको महाऋणी हूं, उनकी आज्ञा पालन भिन्न उस ऋण से क्योंकर मुक्त हो सकती हूं?

बिजयसिंह। सन्तान से पिता का जो कर्तव्य है सो वह करते हैं? जो तुम उनकी आज्ञा पालन करोगी? राजकुमारि, अब मत बिलम्ब करो, मेरी बात सुनो।

सरोजिनी। राजकुमार, मैं फिर कहती हूं, कि मुझे मार्ज्जना करिये। मेरे जीने की अपेचा, क्या मेरा धर्म अधिक मूल्यवान नहीं है? इस दुःखिनी को आप मार्ज्जना करिये, मैं पिता जी की आज्ञा क्योंकर उल्लंघन करूं।

बिजयसिंह। अच्छा, तो इस बिषय में अधिक वार्त्ता करने से प्रयोजन नहीं है, अपने पिताही का आदेश पालन करो। मृत्यु जो तुम को इतनी प्रार्थनीय है, तो तुम स्वच्छन्द उसका आलिङ्गन करो। मैं अब उसमें बाधा न देऊंगा। राजकुमारि, जाव अब बिलम्ब मत करो, मैं भी वहीं अभी आता हूं, यदि देवी चतुर्भुजा सत्यही रक्त की प्यासी होंगी तो उनकी प्यास शीघ्रही निवृत होगी, इस में कुछ भी सन्देह नहीं। किन्तु ऐसा रक्तपान किसी ने न देखा होगा। मेरे अन्ध प्रेम के निकट कुछ अधर्म न जान पड़ैगा। पहिले तो पुरोहित नराधम का मुण्डपात करना होगा, फिर और जो पाखण्ड घातक उसके सहकारी हैं,

उनके रक्त से यज्ञवेदी धौत करूंगा। इस प्रलय काण्ड में यदि असिद्वारा तुम्हारे पिता का कोई अनिष्ट हो जाय तो उसका दोषी मैं न होऊंगा।

(बिजयसिंह का प्रस्थानोद्यम)

सरोजिनी। राजकुमार! ठहरिये मैं चलती हूं।

(बिजयसिंह का प्रस्थान)

(स्वगत) हा! कुमार बिजयसिंह भी हमसे बिमुख हो गये, प्राण रखने की ममता जो कुछ बच रही थी, वह भी अब जाती रही, अब जीने की कुछ भी इच्छा नहीं अब जिस ओर फिर कर देखती हूं, उधर मेरा परम बन्धु मृत्यु ही देख पड़ता है। मातः चतुर्भुजे! मुझे ग्रहण कीजिये अब यन्त्रणा नहीं सही जाती।

(राजमहिषी, सूरदास और रक्षकगण का प्रवेश)

राजमहिषी। (दौड़ कर, सरोजिनी को आलिङ्गन करके) यह क्या? मेरी बेटी को अकेले छोड़ कर सब चले गये। रामदास किसी कार्य्य का नहीं है, तुझको लेकर इतनी देर में भी न भग सका? वे सब कहां गये? अमला कहां है?

सरोजिनी। मां वे सब निकट ही हैं।

राजमहिषी। बेटी का मुख एकबारगी सूख गया है, कहीं लड़कों से भी ऐसे कठिन दुःख सहे जा सकते हैं।

(सेना को थोड़ी दूर आते देख कर) यह रक्तपिपासू फिर यहां आते हैं, (सूरदास से) भीरु! तू क्या विश्वासघातक हो कर हम लोगों को शत्रु के हस्त में समर्पण करने का विचार करता है?

सूरदास। देवि! इस बात को मन में कभी न लाना जब तक हम लोगों को देह में एक बून्द भी रक्त रहेगा तब तक हम युद्ध से शान्त न होंगे। परन्तु दो चार मनुष्यों से कितनी आशा है? एक दो मनुष्य नहीं, सारी सेना इस निष्ठुर कार्य्य में लगी है, कहीं दया का लेश मात्र नहीं है। इस समय भैरवाचार्य्य ही सर्व्वमय कर्त्ता होकर प्रभुत्व कर रहा है, और बलिदान के निमित्त अत्यन्त व्यस्त है। महाराज भी राज्य जाने के डर से उन्हीं के मत से चलते हैं। कुमार बिजयसिंह जिनका सब कोई भय करते हैं, वे भी इसका प्रतिबिधान नहीं करते देख पड़ते। उनका भी इसमें क्या दोष है? जो सैन्यतरङ्ग चारों ओर से घेरे है, इसमें प्रवश करने की किसकी सामर्थ है?

राजमहिषी। उनको आने देव, देखें तो बेटी को मेरे निकट से कैसे लिये जाते हैं, मेरे मारे बिना तो कभी न ले जाने पावेंगे।

सरोजिनी। मां! तुम ने इस अभागिनी को कुक्षण में गर्भ में धारण किया था। मेरी इस अवस्था में तुम किस भांति

मुझे बचावोगो ? मनुष्य और देवता सब मेरे प्रतिकूल हैं, मेरे बचाने की चेष्टा करना अब वृथा है। सारी सेना पिता जी से विद्रोही हो गई है। और मां। पिता जी का भी तो कुछ दोष नहीं है।

राजमहिषी। बेटी। तुझे तो कुछ भी दोष नहीं देख पड़ता, जो उसकी सम्मति इस बात में न होती तो यह काण्ड क्यों होता ?

सरोजिनी। मां। उन्हों ने तो बचाने की बहुत चेष्टा की थी।

राजमहिषी। बचाने की चेष्टा की थी! वह सब उसकी प्रवंचना और चातुरी थी।

सरोजिनी। मां। पिता जी का सब सुख सौभाग्य देवताओं ही से है, तब उनकी आज्ञा क्योंकर अग्राह्य करें ? मां! तू मेरी मृत्यु के लिये इतनी क्यों दुःखित होती है ? मैं जो चली भी जाऊंगी, तो मेरे बारह भाई तो रहेंगे। मां उनको लेकर तू सुखी होना।

राजमहिषी। बेटी। तू भी कैसी निष्ठुर हो गई है ? तू कैसे मुझको छोड़ चली जायगी ? बेटी! क्या! मुझको छोड़ जाकर तू सुखी होगी ? हा। यह क्या! यह पिशाच तो इधर ही आते हैं। अब की सर्व्वनाश भया।

(सेनानायक के साथ सैन्यगण का प्रवेश)

सेनानायक। (सरोजिनी से) राजकुमारि! महाराज ने आप को मन्दिर में लिवा लाने के लिये भेजा है।

सरोजिनी। मां! तो मैं अब जाती हूं, इस बार अभागिनी को जन्म के लिये बिदा देव मां! बस यही पिछली बार है कि आप के चरण का दर्शन होगा। (रोती है)

(सैन्यगण के साथ सरोजिनी जाने को है)

राजमहिषी। बेटी मुझको छोड़ कर कहां जायगी? मैं तुझको कभी नहीं छोड़ूंगी, मैं भी सङ्ग चलूंगी! यदि सत्यही चतुर्भुजा देवी बलि चाहती हैं, तो मैं प्रस्तुत हूं, महाराज मुझको बलि दें।

सरोजिनी। मां! यह बात न कहो, चतुर्भुजा देवी, मेरे रक्त भिन्न और किसी भांति न तृप्त होंगी। मां! मेरे लिये तुम क्यों इतनी दुःखित होती हो? मृत्यु से मुझे कुछ भी न दुःख होगा। मैं सुख से प्राण त्याग करूंगी। केवल तुमको अब इस जन्म में न देख सकूंगी, इसी से—(क्रन्दन)

सेनानायक। राजकुमारि! अब बिलम्ब न कीजिये। महाराज ने आप से कहने को यह कह दिया था, कि यदि पिता को अवाध्य होने को आप की इच्छा नहोवै, तो क्षण मात्र भी न बिलम्ब कीजियेगा।

सरोजिनी। मां! तो मैं जाती हूं। और क्या तुम से कहूं, परन्तु तौ भी एक बात मानना, मेरी मृत्यु के लिये

पिता जी को तिरस्कार न करना। यही मेरी पिछली विनती है। अब मैं जन्म भर के लिये बिदा होती हूं। एक बिन्ती और है, जितने दिनों तक रोशनयार यहां रहे, देखो उसे कष्ट न मिले।

(सैन्यगण के साथ सरोजिनी का रोते २ जाना और राजमहिषी का उसी के पीछे चलना)

सेनानायक। (महिषी से) देवि! महाराज ने आप को आने से निषेध कर दिया है।

राजमहिषी। क्या। मुझको आने से निषेध किया है? मैं इस बात को न मानूंगी, बेटी मेरी जहां जायगी मैं भी वहीं जाऊंगी, देखूं मुझे कौन रोकता है? रास्ता छोड़ देव। मेरी बात नहीं सुनता, राजमहिषी की बात नहीं सुनता? सूरदास। तुम सब यहां क्या करने आये हो?

सूरदास। देवि! इस बार महाराज की आदेश है, इस बार क्योंकर—

राजमहिषी। भीरु। दे अपनी तलवार। [सूरदास से तलवार छुड़ाय कर सेनानायक से] पथ छोड़ देव—नहीं तो अभी—

सेनानायक। (स्वगत) राजमहिषी को देह क्योंकर स्पर्श करूं? पथ छोड़नाही पड़ा।

(सेनागण पथ छोड़ देते हैं—राजमहिषी का वेग से प्रस्थान फिर सभों का प्रस्थान।)

इति प्रथम गर्भाङ्कः।

द्वितीय गर्भाङ्क ।

(मन्दिर के निकटस्थ विजन स्थान)

भैरवाचार्य्य नामधारी महम्मद अली का प्रवेश ।

महम्मदअली । (चलते हुये स्वगत) इस समय तो हिन्दुओं में अच्छे प्रकार से झगड़ा खड़ा हो गया है, बलिदान के समय और भी भयानक हाहाकार मचेगा । चित्तौरपुरी तो इस समय सम्पूर्ण प्रकार से अरक्षित है, क्योंकि सारी सेना यहां पूजा के निमित्त चली आई है, आक्रमण करने के लिये ठीक यही समय है, इधर हिन्दू लोग आपुस के झगड़े में समय व्यतीत करते हैं; उधर अलाउद्दीन को आक्रमण करने का अच्छा अवसर मिलैगा। यद्यपि चित्तौर यहां से दूर नहीं है; तथापि हिन्दू लोग जब तक यहां से प्रस्तुत हो कर वहां तक जायेंगे, तब तक बिलम्ब हो जाने की सम्भावना है । इस बार निश्चय हमारी जय होगी, और शुद्ध जयही न होगी, मैंने जो जाल रचा है, उस से चित्तौर का सिंहासन चिरकाल के लिये मेरेही अधिकार में रहेगा। लक्ष्मणसिंह के तेजस्वी पुत्र जब तक जीवैंगे तब तक मेरी यह आशा कभी न पूर्ण होगी, परन्तु उसका भी एक उपाय मैंने किया है । मैंने जो मिथ्या देववाणी करी है कि:—

————————बाप्पा बंशजराज ।

जो धारत सिर छत्र निज ताकी राखत लाज ॥

द्वादश राजकुमार ते सकल युद्ध महँ नाहिं ।
यवनन ते संग्राम करि मरि गिरि हैं महि माहिं ॥
तौलौं तेरे वंश में राज सम्पदा कोश ।
रहत न कौनेउ यतन ते यह मम वाणी पोश ॥

सो इस बात को वह निर्बोध धर्मान्ध लक्ष्मणसिंह दैववाणी जान कर विश्वास करता है, इसमें कुछ सन्देह नहीं; और इसमें जो मेरा मतलब है सो अवश्य सिद्ध होगा। लक्ष्मणसिंह एकबारगी निरवंश हो जायगा, उसके द्वादश पुत्रों को अवश्य प्राण देने पड़ेंगे, और उसके पुत्रगण के मरने पर हम लोग निष्कण्टक चित्तौर में राज्य करेंगे; किन्तु इस समय बादशाह को किस प्रकार सम्वाद देऊं ? फ़तेउल्ला यद्यपि बक्की था, परन्तु बहुत बार हमारे काम आता था, सो जब से गया तब से फिरने का नामही न लिया, अब क्या करूं ? जो इस समय भी आ जावे तो भी अच्छा है। देखो तो कैसे मजे से दिल्ली में बैठा है। वह कौन आता है ? अरे यह तो वही है, नाम लेतेही आकर उपस्थित हुआ, देखो न कैसे हँसते हुये आ रहा है, वाह ! वाह ! बड़ा खुश आ रहा है।

(फ़तेउल्ला का प्रवेश)

फ़तेउल्ला। चाचा जी ! हम आय गयन सलाम !

महम्मद । आहा। आप आ गये, हमें तारि दिया !

और क्या ? हरामज़ादा ! हमने तुझे इतना सिखलाया और तू सब गँवाय आया ?

फ़तेउल्ला। (महम्मद की ओर टक २ देख कर) मोहका का सिखवो रहेउ ?

महम्मद। हमने तुझे नहीं सिखला दिया था, कि हम से सलाम कभी न करना, वरन हमको हिन्दुओं की तरह प्रणाम करना सो तू सब भूल गया ?

फ़तेउल्ला। चाचा जी। भूल ह्वैगै। एई अबको दांई परनाम करत हौं (प्रणाम करता है) जोई सलाम आय सोई परनाम आय। बातै तो आय, एतै भेदु है कि यो हिन्दुन का कायदा आय और वो मुसलमानन का आय।

महम्मद। अब तुम्हारी व्याख्या का कुछ काम नहीं है, बहुत हुआ।

फ़तेउल्ला। चाचा जी, जो भूल मोहते भय है वह का तो मैंही मानत हौं धमकावत काहे का हौ ?

महम्मद। अबे क्यों बे ! फिर हमको चाचा जी कहता है ? तुझ से मैंने हज़ारों बार कह दिया कि तू मुझ को भैरवाचार्य्य महाशय कह कर बुलाया कर तो भी तेरा चाचा जी नहीं छूटता ? जान पड़ता है कि किसी दिन मुझे पकड़ावैगा।

फ़तेउल्ला। मैं का कहत हौं ? मैं तो यहै कहत हौं कि

मोहि ते एत्ती बड़ी बात काहे का निकरी, यही ते छोटि करि लीन्हि हौं।

महम्मद०। अच्छा न होय, आचार्य्यही कहा कर, चाचा जी का है वे?

फ़तेउल्ला। मैं और का कहत हौं, मैंहूं तो वहै कहत हौं।

मह०। तू क्या कहता है? अच्छा कह तो आचार्य्य जी।

फ़तेउल्ला। चाचा जी। जो तुम कहत हौ सोई तो मैंहूं कहत हौं।

महम्मद०। हां ठीक कहता है (स्वगत) इस से बकना बेफ़ायदा है। (प्रकाश्य) अच्छा वह बात जाने दे, यह बतलाव कि तूने आने में इतनी देरी क्यों की?

फ़तेउल्ला। देरि काहे कीन हूं? मोर कौन २ दुर्गति ह्वैगै सो तो एको न पूछ्यो चाचा जी। खाली देरि काहे कीन्हों? देरि काहे कीन्हीं? (उच्चैः स्वरे रोदन) मोरि जौन खरावी भय है सो खोदाय जानत है, और का कहौं।

महम्मद०। चुप चुप, अबे इतना शोर मत कर। (स्वगत) इस बदमाश ने हमको बड़ा ही दिक़ किया; स्थान निर्जन है, यही रक्षा है, नहीं तो क्या जानी क्या होता। आः। इसको रखने से भी नहीं बनता, और न रखने से काम नहीं चलता। अच्छी मुश्किल में पड़े! (प्रकाश्य) तुझे क्या हुआ था, बताव तो सही, परन्तु धीरे धीरे बोल चिल्ला नहीं।

फ़तेउल्ला। (मृदु स्वर से) और दुख कै बात का कहौं, चाचा जी! जब हियां की नौतिन आवंत रहौं तब राह मां हिन्दू ससुरन मोहका पकड़ि कर कैद कर दीन्हिन, और जो कुछ बेइज्जती कीन्हिन सो तुम ते का बतावन, चाचा जी जब पैसा कौड़ी कुछ न पाइन तब मोरि ओढ़ना लत्ता छिनाय कर एक गाले में चून और दूसरे में कोइला लगाय के हांकि दीन्हिन। चाचा जी, मोरि कौन २ दुर्दशा कीन हैन तौनि तुमते का कहन।

महम्मद०। और कोई बात तो नहीं तूने प्रकाश की? नहीं तो सर्व्वनाश हो जायगा।

फ़तेउल्ला। मोरे पट कै बात कोऊ जानो? ऐसन गदहा मैं नहीं आहिऊँ। चहे मोरि जान जाति रहै, मुलु पेटे कै बात कोऊ न जानै पाई।

महम्मद०। अच्छा है, जो तेरे पेट की बात कोई नहीं जान सकता, किन्तु यह तो बतला कि हमारी चिट्ठियां तो नहीं कहीं फेंक आया?

फ़ते०। ए चाचा जी! वो तो मोरी बचुकिया मां रहैं।

महo। (चकित हो कर) अबे यह क्या कर आया? सर्व्वनाश कर दिया।

फतेउल्ला। मोर कपड़ा लत्ता छिनाय लीन्हन तब मैं का कहौं? मैं जो अपनि जान लेकै भागि आंएवँ यहै खैर भै।

महम्मद। (स्वगत) यह तो सर्व्वनाश हुआ। अब क्या करूं? चिट्ठी फ़ारसी में लिखी थी, यही कुशल है। हिंदूओं का साध्य नहीं कि वे उस लिखने को पढ़ लें। नहीं इस विषय में कुछ भी डर नहीं है। (प्रकाश्य) देख तुझे फिर दिल्ली जाना होगा। यह चिट्ठी बादशाह के यहां ले जा—क्यों ले जा सकैगा?

फ़तेउल्ला। लै काहे न जाय सकिहौं, मैं अबहीं लिये जात हौं, हियां ते जाए तें खैर है।

महम्मद। तो ले (पत्रप्रदान) देख, इस वार सावधानता से ले जाना।

फ़तेउल्ला। मोहका बतावै का न परी, मैं जात हौं, सलाम चाचा जौ। (प्रस्थान)

महम्मद। अब जांय देखैं मन्दिर के आंगन में वलिदान की सामग्री हुई है वा नहीं। जान पड़ता है कि इतनी देर में सब हो गया होगा, (प्रस्थान)

इति द्वितीय गर्भाङ्कः।

तृतीय गर्भाङ्कः।

चतुर्भुजा देवी का मन्दिर प्राङ्गन।

(धूप धूना, प्रभृति वलिदान की सामग्री—सरोजिनी यज्ञवेदी के सन्मुख वैठी है—लक्ष्मणसिंह म्लान भाव में द-

ण्डायमान हैं—पुरोहित भैरवाचार्य्य आसन पर बैठे हैं—लक्ष्मणसिंह के निकट रणधीरसिंह खड़े हैं, चारों ओर सैन्यगण।)

भैरवाचार्य्य। महाराज! अब बिलम्ब नहीं है, बलिदान का समय आ गया, अनुमति दीजिये।

लक्ष्मणसिंह। मेरी अनुमति से इस समय तुम्हारा क्या कार्य्य होगा? इस समय इस रक्तपिपासु रणधीरसिंह से पूछो, इस उन्मत्त सेना से पूछो, मेरी बात इस समय कौन मानेगा?

रणधीरसिंह। महाराज! दैव के प्रतिकूल संग्राम करना निष्फल है।

भैरवाचार्य्य। महाराज! शुभक्षण व्यतीत हुआ जाता है, अब बिलम्ब न करिये।

सैन्यगण! (कलरव करते हुये) महाराज शीघ्र आदेश दीजिये, बिलम्ब न कीजिये—यह क्या बात है? क्या मुसलमानों से युद्ध में हम को पराजित कराइयेगा? और क्या हमारे स्त्री पुत्र की दुर्गति होने दीजियेगा?

सरोजिनी। पिता जी! अनुमति दीजिये, अब बिलम्ब से क्या फल है? देखिये मेरे रक्त के लिये सब सेना उन्मत्त हो रही है, अब इस समय मुझे जन्म भर के लिये बिदा कीजिये और यह कार्य्य समाप्त होने दीजिये।

भ्रम हो जाता है, मैं तो मनुष्य ही हूं। यदि अनुमति होय तो एक बार फिर मैं गणना करूं।

बिजयसिंह। अच्छा गणना कर। सैन्यगण! इसको छोड़ देव (भैरवाचार्य्य गणना के मिस कुछ मिट्टी पर लिखने लगा) बिजयसिंह। (रणधीर के निकट आ कर) आओरणधीर! अब देखें कौन किसको यमालय भेजता है।

रणधीरसिंह। आओ—स्वच्छन्द—

(दोनों किञ्चित काल असियुद्ध करते हैं)

भैरवा०। महाशय! शान्त होइये, सचमुच मेरी गणना में भूल हुई थी।

रणधीरसिंह। क्या! गणना में भूल थी? (लड़ना छोड़ कर) महाशय! मैं अस्त्र परित्याग करता हूं।

विजयसिंह। क्या। इतनी ही देर में—

रणधीर०। अब मुझ से और आप से कुछ बिवाद नहीं है।

बिजयसिंह। यह आप क्या कहते हैं?

रणधीरसिंह। मैंने गणना में ध्रुव विश्वास कर के और स्वदेश मङ्गल कामनाय बलिदान को कर्तव्य जान कर यह किया था। एक अबला बाला को बलि दे कर थोड़ी देर में सारे राज परिवार को शोकसागर में निमग्न करता था, राजद्रोही हो कर, महाराज के प्रति कितना अत्याचार किया कितने अन्याय व्यवहार किये—आप के साथ युद्ध में प्रवृत्त

हुवा यह सब केवल उस गणना पर बिश्वास कर के किया था। जब उस गणना ही में भूल ठहरी, तो मेरी सब बातें करनी भूल हुईं। क्या ही आश्चर्य्य है! देखो आचार्य्य महाशय! तुम्हारी एक भूल से क्या ही भयानक कांड उपस्थित हुआ है, आप सब कुछ कर सकते हैं! क्या कहूं! आप ब्राह्मण हैं—नहीं तो—

भैरवाचार्य्य। महाशय! शास्त्र ही में लिखा है, "मुनीनां च मतिभ्रमः"। जब महाराज बलिदान के बिरोध हो कर खड़े हुये तभी मुझे कुछ संदेह हुआ था, कि यदि इस में बाधा पड़ती है तो यह बलि देवताओं के अभिप्रेत नहीं है। और मेरी गणना में अवश्य कोई भूल हो गई होगी। इसी लिये मैं भी टाल मटोल करता था, नहीं तो न जाने कबही का यह कार्य्य शेष हो गया होता जब कुमार बिजयसिंह इसके प्रतिबन्धक हुये तब मेरा सन्देह और भी दृढ़ हुआ—अब मैंने गणना करके देखा तो ज्ञात हुआ कि मेरा सन्देह ठीक था।

रणधीरसिंह। क्या ही आश्चर्य्य है! शत्रु हमारे गृहद्वार पर हैं, कहां तो हम लोगों को एक हो कर उनको हटाने की चेष्टा करनी चाहिये, कहां हमारे ही बीच में गृह बिच्छेद होने का उपक्रम था। महाराज! आप के चरणों पर यह असि रखता हूं, आप बिचार कर जो कुछ मुझको दण्ड

जियेगा सो मैं शिरोधार्य्य करूंगा। महाराज! मैं बड़ा अपराधी हूं, प्राणदण्ड से भी यदि और कोई अधिक दण्ड दीजिये तो मैं उसके भी उपयुक्त हूं।

लक्ष्मणसिंह। सेनापति रणधीर! अपनी असि तुम फिर ग्रहण करो। तुम्हारा लक्ष्य ऐसा उच्च था कि तुम्हारे सब दोष मार्जनीय हैं। मेरी सरोजिनी की रक्षा हो गई यही बहुत है। वत्स बिजयसिंह! मैं तुम्हारे निकट कृतघ्नता-पाश में चिर आबद्ध रहूंगा।

रणधीरसिंह। भैरवाचार्य्य महाशय। अब आप की गणना में क्या निकला? अब बलि किस भांति दी जायगी? शीघ्र उत्तर दीजिये, क्योंकि यहां जितनी ही देरी होगी, मुसलमानों को उतना ही सुयोग होगा।

लक्ष्मणसिंह। रणधीरसिंह ठीक कहते हैं – इस समय कार्य्य शीघ्र ही करिये; वत्स बिजयसिंह। यह लेव- सरोजिनी को तुम्हे समर्पण करता हूं—तुम उसको महिषी के निकट लिवा जाओ—क्योंकि वे अत्यन्त व्याकुल होंगी।

बिजयसिंह। महाराज। आप की आज्ञा शिरोधार्य्य है राजकुमारि। मेरी अनुगामिनी होइये।

(बिजयसिंह और सरोजिनी का प्रस्थान)

भैरवा०। (स्वगत) मेरा मतलब न पूरा हुआ; तो न सही, परन्तु बहुत कुछ हासिल हो गया। जब ये सब बि-

बाद में मत्त थे, उस समय मैंने बादशाह के पास खबर भेज दी थी। अब मुसलमानों ने चित्तौर पर चढ़ाई कर दी होगी। अब बलिदान के विषय में क्या बताऊं? जह! कुछ भी बताय दो। (प्रकाश्य, गम्भीर भाव से) किस भांतिकी बलि चतुर्भुजा देवी को अभिप्रेत होगी सो सुनो। देववाणी इस प्रकार हुई थी –

"करत युद्धसय्या ह्रथा यवनन के विपरीत।
जो तेरे गृह जलज सम रूपवती सुविनीत॥
है ललना तेहि चतज अति तात सके जो देइ।
तो चितौर अजयी रहे नष्ट होय नहिं सेइ"॥

इस स्थल में "तेरे गृह" के अर्थ तेरे राज्य के हैं, और "जलज सम" के अर्थ पद्मपुष्प सदृश लावण्यवती है, इन्हीं पदों के अर्थ वैपरीत्य हेतु सब गणना में भूल हो गई। और अब मुझे ज्ञान पड़ा क्यों भूल हुई थी। गणना शनिवार को रात्रि के शेष यामार्द्ध में की गई थी, इसी कारण गणना में कालरात्रि दोष हो गया। ज्योतिष शास्त्र में लिखा है कि—

रवौ रसाब्धी सितगौ हयाब्धी, द्वयं महीजे विधुजे शराब्धी।
गुरौ शराष्टौ भृगुजे तृतीया, शनौ रसाद्यन्तमिति क्षपायाम्॥

महाशय! आप जानेंगे कि यह दोष गणना के पक्ष में बड़ा विघ्नकारी है, गणना यदि ठीक भी होय तो इस काल वेला के दोष से अर्थ विपरीत हो जाता है। अब जो ग-

तरवारि के बल से उनके बीच में पथ खोल लिया। तब घोरतर युद्ध उपस्थित हुआ रक्त की नदी बहने लगी, मृत और आहत से रणस्थल आच्छादित हो गया। इसी भांति युद्ध होते होते शत्रु के बीच एक बारगी आतङ्क उपस्थित हो गया, और वे प्राण भय से ऐसे भागे कि उनका पता हो न लगा। इस भांति मैं ने बलपूर्व्वक मन्दिर में प्रवेश किया और वहां क्या देखा कि महाराज "मारो न, मारो न" कह कर चिल्लाते हैं और भैरवाचार्य्य तलवार उठाये आघात करने पर उद्यत हैं—जैसे ही वह मारने को था कि मैंने उसके हाथ से तरवारि छीन ली और उसको उचित दण्ड देने पर हुआ कि वह कहने लगा कि अब बलिदान में व्याघात हुआ है तब गणना में अवश्य कोई व्यतिक्रम हुआ होगा। यह कह कर फिर गणना करने में प्रवृत हुआ, थोड़े काल में कहने लगा कि उसके गिनने में वास्तविक भूल थी और यह बलि देवी के अभिप्रेत नहीं है। तब सब सन्तुष्ट हो गये और महाराज ने अह्लादित होकर सरोजिनी को मेरे हस्त में समर्पण किया। मैं राजकुमारी को लेकर मन्दिर से चला आया। वे अत्यन्त क्लान्त हो गयीं थीं इस से उनको दूसरे ग्राम के डेरों में बिठा कर मैं आप को यह सम्बाद देने आया हूं। मैं उनको अभी लिवाये आता हूं आप और कोई चिन्ता न कीजिये।

राजम०। आः अब देह में प्राण आये! बेटा तुम चिरंजीवी हो! अब उसको लिवा लाने को आवश्यकता नहीं, वहां मैंहीं चलती हूं। बेटा! अब मैं तुम को क्या देऊं? क्या मूल्य देकर, क्या उपहार देकर, उस उपकार का बदला देऊं मैं नहीं सोच सकती।

बिजय०। मैं और कुछ नहीं चाहता, आप का आशीर्वाद ही यथेष्ट है। देवि आप को न जाना पड़ा, राजकुमारी आपही आती हैं, और ये महाराज भी इधर से आते हैं।

राजम०। कहां? बेटी कहां है? मेरी सरोजिनी कहां है?

(लक्ष्मणसिंह और राजकुमारी का प्रवेश)

सरोजिनी। मां कहां हैं? मां कहां हैं?

राजम०। (दौड़ कर आलिंगन करती है) आओ बेटि! आओ प्यारी (दोनों परस्पर आलिंगन बद्ध होकर किंचित काल स्तंभित भाव और वाष्पाकुल लोचन ठहरती हैं)

लक्ष्मण०। आओ बेटा बिजयसिंह! (आलिंगन) तुह्मारे प्रसाद से फिर हम लोग सुखी हुए।

राजम०। (राजा के निकट आकर) महाराज! इस दासी के अपराध क्षमा कीजियेगा मैं ने आप को अनेक कटुवाक्य कहे हैं, बहुत तिरस्कार किया है मैं ने गुरुतर पाप किया है।

लक्ष्मण०। नहीं देवि! इसमें तुम्हारा कुछ दोष नहीं। मैं ऐसे दुष्कर्म्म में प्रवृत्त हुवा था, उस में तिरस्कारही के योग्य था। महिषि जैसे पतंग अग्नि में आपही से पतित होता है वैसेही मैं ने भी अपने ऊपर आपही विपद को बुलाया था। (कतिपय सिपाहियों के साथ घबड़ाये हुए रणधीरसिंह का प्रवेश)

रणधीर०। महाराज! सर्व्वनाश उपस्थित है!

लक्ष्मण०। क्या हुवा?

विजय०। मुसलमानों का कुछ सम्बाद पाया है क्या?

रणधीर०। वे चित्तौरपुरी के अति निकट आ गये हैं बरन थोड़ीही देर में पुरी के भीतर प्रवेश करेंगे।

लक्ष्मण०। क्याही सर्व्वनाश हुआ! चितौर तो इस समय अरक्षित है मेरे द्वादश पुत्र केवल वहां है और सब सेना यहां चली आई है। इस समय सरोजिनी और राजमहिषी क्यों कर महलों में निर्विघ्न पहुंचेगी?

विजय०। महाराज! इसका भार मैंने लिया पहिले इनको महलों में पहुंचा आऊंगा, फिर युद्ध क्षेत्र में जाऊंगा।

रणधीर०। तो चलिये, अब विलम्ब न करिये, हमारी सब सेना प्रस्तुत है।

राजमहिषी। (स्वगत) यह अब क्या विपद आन पड़ी!

लक्ष्मणसिंह। आओ सब मेरे अनुगामी हो।

सैन्यगण। जय! राजा लक्ष्मणसिंह की—जय—जय—महाराज की—जय—

(लक्ष्मणसिंह और सबों का प्रस्थान)

इति चतुर्थ गर्भाङ्क।

पञ्चमाङ्क समाप्त।

षष्ठमाङ्क।

चित्तौरपुरी।

महल का आंगन।

अग्निकुण्ड प्रज्वलित धूपधूनी प्रभृति उपकरण सज्जित।

(गेरुये वस्त्र पहिरे हुये सरोजिनी और राजमहिषी का प्रवेश)

राजमहिषी। बेटी सरोजिनी! बिधाता ने तेरे कपाल में सुख नहीं लिखा। एक बिपत्ति नहीं हटने पाई और दूसरी उपस्थित हो गई, और यह इस्से भी अधिक भयानक है। यदि मुसलमान जयी हो कर यहां तक प्रवेश कर आवेंगे तो हम लोगों का सतीत्व धर्म्मरक्षा करने के निमित्त अग्निदेवशरण भिन्न और कोई उपाय नहीं देख पड़ता।

सरोजिनी। मां जब कुमार विजयसिंह हमारे सहायक हैं, तब भी आप मुसलमानों के जयी होने की आशा करती हैं?

राजमहिषी। युद्ध की वार्ता कोई नहीं जानता। सब

(अलाउद्दीन और मुसलमान सेना का प्रवेश)

अला०। यह क्या वही बहादुर हिन्दू राजपूत है जो हरम के दरवाजे पर हमारी फ़ोज के सैकड़ों आदमियों से अकेला लड़ता था ? (सरोजिनी को देख कर) क्या यही पद्मिनी बेगम हैं ? माश: अल्लाह बहुत ही हसीन हैं ! इसकी बिखरी हुई जुल्फों और हिरनी कीसी आंखों से अश्क मुसलसल ने उसके हुस्न को और ही जिला दे दिया है। (प्रकाश) बेगम ! आप क्यों अश्क-बार है ? हमारे साथ देहली चलिए, हम वहां आप को ख़ास महल बनावेंगे। आप ही का नाम पद्मिनी है ? आप ही के लिये हम ने चितौर पर चढ़ाई की थी। जब से हम ने आप की शकल आईन. में देखी उसी वक़्त से आप पर फ़रेफ़्त: हो रहा हूं। उठिये-ऐसे नाजुक बदन को यह खाकनशीनी ज़ेबा नहीं।

(हाथ पकड़ने की चेष्टा करता है)

सरोजिनी ! (शीघ्र उठ कर थोड़ी दूर हट कर) अस्पृश्य यवन ! मुझे स्पर्श मत करना।

अला०। बेगम ! आप मुझ से इतनी क्यों नाराज़ हैं आओ मेरे पास आओ-कुछ डरो मत (आगे बढ़ता है)

सरोजिनी। नराधम ! वहीं रहना—एक पैर भी आगे न बढ़ना।

अला०। बेगम ! तुम इस वक़्त बेबस औरत हो और

तुम्हारा यहां कोई हिमायती भी तो नहीं है अगर मैं चाहूं तो तुम को जबरदस्ती से ले जा सकता हूं।

सरोजिनी। तेरा साध्य नहीं।

अला०। देखो बेगम! समझ कर बात करो-अगर मुझे गुस्सा आगया तो तुम्हारा बचना मुहाल होगा।

सरोजिनी। राजपूतमहिला तेरे सदृश का-पुरषों के क्रोध का भय नहीं करतीं।

अला०। देखो बेगम! अब भी मैं तुम को मुहलत देता हूं अगर हमारी मरज़ी मुवाफ़िक़ तुम कारबंद होगी तो तुम्हें बड़ी भारी सरफ़राज़ी बख़शूंगा नहीं तो—

सरोजिनी। यवन दस्यु! तुझे यह बात कहते लाज भी नहीं लगती? सूर्य्यबंशीय महाराज लक्ष्मणसिंह की दुहिता को प्रलोभन दिखलाता है?

अला०। बेगम! तुम बड़ी बेवकूफ़ी करती हो! मैं फिर तुम से कहता हूं कि मुझे ज्यादा गुस्सा न दिलाओ। तुम किस भरोसे पर ऐसी बात कहती हो? अगर मैं ज़बरदस्ती करूं तो तुम्हारी हिमायत कौन कर सकता है? मुझे तो कोई भी नहीं दिखाई देता।

सरोजिनी। जानता नहीं कि असहाया राजपूतमहिला का धर्म्म ही एक मात्र सहाय है।

अला०। तो अब ज्यादा बात चीत बेफ़ायदा है मिस्रत

भी समाजत का कुछ भी असर न हुआ अब देखता हूं कि तुम्हारी कौन हिमायत करता है? (पकड़ने को आगे बढ़ता है)

सरोजिनी। देख नराधम। मेरा कौन सहाय है।

(अग्निकुण्ड में पतन और मृत्यु)

अला०। (आश्चर्यित होकर) क्याही ताअजुब है! बिला ख़ौफ़ आग में कूद पड़ीं। मैंने जिस मतलब से इतनी तकलीफ़ उठाई वह कुछ भी न हासिल हुआ!

सैनिक०। जहांपनाह! आपको धोखा हुआ यह पद्मिनी नहीं थीं।

अला०। तब वे कहां हैं?

सैनिक०। हुजूर। भीमसिंह और पद्मिनी बेगम अलग महल में रहती थीं।

अला०। तो हम को वहीं ले चलो।

सैनिक०। जहांपनाह। वहां जाना बेफ़ायदा है क्योंकि पद्मिनी बेगम भी इसी तरह जल कर ख़ाक होगई होगीं।

अला०। क्या ही ताअजुब है मैंने तो ऐसा कभी न सुना था।

सैनिक०। हुजूर। और आप से क्या अर्ज करूं, मेरे साथ अगर तशरीफ़ ले चलिए तो घर २ यही देखिएगा घर २ चिता जलती होगी और तमाम शहर में एक भी औरत न बची होगी।

अला०। अच्छा चलो देखें।

(एक ओर से सभों का प्रस्थान और दूसरी ओर से प्रवेश)

(पट परिवर्त्तन)

चिताधूमाच्छन्न चित्तौर का राजपथ।

अला०। यह क्या! यह तो तमाम चित्तौर के शहर भर में आग लग रही है। सड़क, बाजार और घरों में सब जगह चिता जल रही हैं—ऊः क्याही ख़ौफ़नाक नज्जारा है; यह क्या! क्या उधर भी आग लगी?

सैनिक। जहाँपनाह। उस तरफ़ इतनी आग लगी है कि घर जल जल कर गिर रहे हैं।

अला०। क्याही ताअजुब की बात है! यह हिन्दू भी अजब बहादुर कौम है!!

नेपथ्य में। अनल अब राखो लाज हमारी।

अला०। यह क्या? (सब सुनने लगे)

(नेपथ्य में कुछ राजपूत-स्त्री मिलकर गाती हैं)

अनल अब राखो लाज हमारी।

हम सब बाला व्यथित बिहाला पति बिन परम दुखारी।
बेगि चिता धकि भस्म करो प्रभु हम सब सरन तिहारी॥
सुनु रे यवन अधम चाण्डालो हृदय दयो तुम जारी।
साखी सुर प्रतिफल पावोगे भोगहुगे दुख भारी॥

अला०! यह तो औरतें सी गाती हैं। कहां तो चारों तरफ़ सूनसान था, कहां यह गीत की आवाज़ आने लगी! अभी मालूम होता है शहर में कुछ औरतें बाकी हैं।

सैनिक। जहाँपनाह। राजपूत लोग जब लड़ाई में शिकस्त खाते तब उनके घरों की औरतें एक रस्म जो बनाम 'ज़हर' मशहूर है करती हैं। बन्दे की राय नाक़िस में यह आता है कि वे वही रस्म कर रही हैं। गुलाम सारा शहर देख आया लेकिन कोई भी औरत नजर न पड़ी—हां जो दो एक बच रहीं होंगी वे भी जलकर मरी जातीं है।

(नेपथ्य में दूसरी ओर एक राजपूत-स्त्री गाती है)

केहि सुख लगि राखहिँ प्रान!

पिता पुत्र पति सब रण सोये अब धौं का कल्यान, ।
दग्ध भयो हिय तन करिहै सोइ शोक करै सोइ पान ॥
त्यागहिँ भूषन बसन रतन सब पिय बिन आज पयान ।
बिना प्रवेश अनल नहि दूजो रक्षक है कोउ आन ॥
अनल सहाय दुःख लखि होवहु पति से करहु मिलान ।
असहाया अबला दुख बूड़ीं कृपा करो भगवान ॥

(सब मिलकर गाती है)

अनल अब राखो लाज हमारी, इत्यादि।

अला०। यह क्या! अब कहां से आवाज़ आने लगी?

(नेपथ्य में और एक राजपूत स्त्री गाती है)

सब चिता में प्रविसीं बाला, अति सुन्दर रूप बिसाला ।
एक २ सब अनल समानी पिय सो मिलन हेतु, अकुलानी ।
सतो धरम सब भाँति निबाहैं लखि निस यवन कराला ॥

(सब मिलकर गातीं हैं)

अनल अब राखो लाज हमारी।
हम सब बाला व्यथित बिहाला पति बिन परम दुखारी ।
बेगि चिता धकि भस्म करी प्रभु हम सब सरन तिहारी ॥
सुनु रे यवन अनल तन जारैं होंहि न दासि तिहारी ।
बिमल बंश को समल करैं नहिं प्राण देंहि बरु वारी ॥

(एक ओर से कुछ राजपूत स्त्रीयां गातीं हैं)

जग देखु खोल कर नैना, हम पतिव्रत रत्न तजै ना ॥
रवि शशि गगन सकल सुर देखहु देखहु यवन अपैना ।
तृण सम प्राण अनल महँ राखैं सत ते नेक टरैं ना ॥

(सब मिलकर गातीं हैं)

अनल अब राखो लाज हमारी। इत्यादि।

अला०। यह क्या! यह तो चारों तरफ से ऐसीही आवाज आती है! क्याही ताअजुब की बात है कि ये लोग बिलकुल ग़ारत हो गये तो भी इनका तेहा अभी नहीं गया।

(सब मिलकर गातीं है)

अनल अब राखो लाज हमारी॥
हम सब बाला व्यथित बिहाला पति बिन परम दुखारी ।
बेगि चिता धकि भस्म करी प्रभु हम सब सरन तिहारी ॥
सुन रे यवन अनल तन जारैं होंहि न दासि तिहारी ।
बिमल बंश को समल करैं नहिं प्राण देंहि बरु बारी ॥

अला०। देखो तो एकबारगी क्याही सन्नाटा छा गया! शाबाश है हिन्दुओं के ईमान को! शाबाश है हिन्दुओं के

मशक़ूरात (स्त्रियों) को !! शाबाश उनकी पाकदामनी को !! अफ़सोस है कि इतनी तकलीफ़ का एवज़ कुछ भी न हुआ ! अब चलो इस उजाड़ शहर में क्या रक्खा है !

(अलाउद्दीन का ससैन्य प्रस्थान)

(रामदास का प्रवेश)

राम० । गम्भीर तम छायो चराचर वारि थल पूरित भयो ।
चित्तौरगढ़ दुख देखि शोकहु शोक महँ बूड़ित ह्वयो ॥
हतभाग्य भारत भो दई धनवान जो तिहुंलोक में ।
सोइ बन्दिशाला सम भयो असहाय भो अति शोक में॥
स्वाधीनता शुभरत्न खोयो बीर भूमि अहो धनी ।
अब देति शोभा यवन सिर तेरी मनोहर शुचि मनी ॥
निस्तब्ध गढ़ चित्तौर भो बिन केतु अरु आयुध बिना ।
कब बहुरि देखैं नयन भरि तेरी मनोहर सु-रचना ॥
कब उदै होंगे सुदिन तेरे ऊँच पदवी सोइ लहै ।
पुनि बीरभूमि सिरोमनी निज छत्र तेरे सिर रहै ॥
अब कौन सुख जग में रह्यो जेहि लागि जीवन राखहीं।
अति खेद दग्धत प्राण मन अब अनल में तन थापहीं ॥
चित्तोर उन्नति व्योम देखेहु दुर्दशा अब अति भइ ।
स्वर्गहि रसातल मेद व्यापेउ सुखद जो भइ दुखमई ॥
जग रङ्गभूमि समान छन भरि क्यों हथा अब जीजिये ।
परि जाय अब तो यवनिका जीवन में क्या सुख लीजिये ॥

यवनिकापतन ।

इति ।

॥ उपन्यास ॥

अघोरपन्थी	।)
स्वर्णलता	॥)
अमलावृत्तान्तमाला	॥।)
अकबर	॥)
ठगवृत्तान्तमाला चारों भाग	३॥)
दीपनिर्व्वाण दोनों भाग	॥।)
प्रणयिनीपरिणय	।)
मयङ्कमोहनी	॥)
प्रेममयी	[illegible]
सौदामिनी	[illegible]
खोयेपनेजमी[illegible]	[illegible]
जया	॥)
पुलिसवृत्तान्तमाला	॥)
चन्द्रकला	।)
दलितकुसुम	।)
चित्तौरचातकी	॥।)
सच्चासपना	।)
संसारदर्पण	२)
प्रमीला	॥।)

बाबू रामकृष्ण वर्म्मा

भारतजीवन प्रेस बनारस।